॥ ॐ ॥

विश्व कर्मा वंशीय-ब्राह्मण कुलादर्शः

अर्थात्

गोत्र प्रवरादर्शः

-०००-

प्रकाशक तथा संशोधक:-

संयोजक-

विश्वकर्मा विकास समिति

देवबन्द (सहारनपुर)

पुस्तक मिलने का पता:-

कृष्ण कुमार आर्य, कृष्णा फर्निचर हाऊस

रेलवे रोड, देवबन्द (सहारनपुर)

मूल्य १.५०

****

स्वर्गीय श्री पूज्य चरण सरोज
पिता पण्डित कृष्णचन्द्र जी
शर्मा की सेवा में

श्री पूज्यवर पिता जी !

आपकी स्मृति में सेवा रूप यह तुच्छ पुस्तक समर्पित स्वीकार हो।

समर्पक:- पं० उदयराम शर्मा

दो शब्द

पाठक वृन्द ! इस "धीमान् ब्राह्मण कुलादर्श" नामक ग्रन्थ का सम्बन्ध अन्य यत्रतत्र अवशिल्पियों को छोड़कर केवल उन ही मुख्य शिल्पी ब्राह्मण समुदायों से है जो कि विश्वकर्म वंशीय हैं, चाहे वे धीमान शिल्पी, ककुहास*, रथकार, पंचाल, मैथिल और विश्वकर्मा आदि २ किसी भी नाम से सम्बोधे जाते हों।

इस ग्रन्थ की रचना में जहां मैंने जाति के बड़े २ विद्वानों, धर्मात्माओं और भारतवर्षीय 'धीमान् ब्राह्मण महासभा' के प्रधान श्री पं० मेहरचन्द जी शर्मा कुसुमाकर (कलकत्ता) तथा प्रधान मन्त्री श्री पं० राधेलाल शर्मा पटनी (सहारनपुर), श्री पं० नेतराम जी शर्मा बी. ए. बी. टी. जलालाबाद (बिजनौर), श्री पं० भूदेव शर्मा शास्त्री कांठ (बिजनौर) तथा पं० सन्तराम जी शर्मा अग्निहोत्री नगीना, पं बाबूराम शर्मा सहादरी, पण्डित विशम्भर दत्त शर्मा पं० श्रीचन्द जी शर्मा शास्त्री नजीबाबाद तथा प्रधान पं० नाथूराम शर्मा (हुसैनपुर) जिला धीमान् ब्राह्मण सभा बिजनौर आदि २ सभाओं से परामर्श लिया है। वहां मैं श्री पं० ऋषिदेव शास्त्री मन्त्री भारतवर्षीय धीमान् ब्राह्मण महासभा

---

*वायन्ते वाम ककुहासो जूर्णायामाध विष्टपि। यद्वां रथो विभिष्यतात् ॥ ऋ० मं० १ सू० ४६ मंत्र ३ ॥

अर्थ—हे वाचस्पति ! ककुहासो जो वृद्ध अवस्था में वर्तमान विद्वान् तुम शिल्पादि विद्या के सिखलाने वाले अपने आत्माओं से ऐसा रथ विमान निर्माण कराओ जो पक्षियों के सदृश अन्तरिक्ष में चले। इस प्रकार ककुहास भी विश्वकर्म वंशी मुख्य शिल्पी हैं।

[यह अर्थ 'विश्वकर्म वंश भास्कर' के पृष्ठ १२३ पंक्ति १०–१२ में गलत छप गया था।]

नगीना (बिजनौर) तथा श्री पं० जी. एम. जी. शर्मा मंत्री भारत-वर्षीय धी० ब्रा० महासभा नग्वाला दयालपुर (जि० सहारनपुर) तथा श्री पं० गणपति जी शर्मा जातिभूषण मंत्री भा० व० धी० ब्रा० महासभा देवबन्द जि० सहारनपुर तथा जगत्प्रसिद्ध परम पूज्य श्री १०८ स्वामी चिदानन्द सरस्वती जी प्र० मं० भा० व० शुद्धिसभा देहली तथा श्री १०८ स्वामी रामेश्वरानन्द सरस्वती जी गुरुकुल घरोंडा तथा श्री १०८ स्वा० अनन्तानन्द सरस्वति जी (श्री विश्वकर्मा मन्दिर बसी, रियासत पटियाला पंजाब) आदि का बड़ा कृतज्ञ और आभारी हूँ कि जिन्होंने मुझे प्रस्तुत ग्रन्थ के निर्माण करने में यथावत सत्यपरामर्श दे अनुगृहीत किया है एवम् सहयोगी ब्राह्मण विद्वानों के परामर्शों से भी लाभ उठाया है, इन सबके लिये मैं कृतज्ञ हूँ और हृदय से धन्यवाद देता हूँ। तथा विशेषकर उपरोक्त श्री पं० जी. एम. जी. शर्मा तथा श्री पं० गणपति जी शर्मा जातिभूषण उक्त दोनों महानुभावों ने इस ग्रन्थ के निर्माण प्रकाशनादि में पुस्तकादि तथा आर्थिकादि सब प्रकार की सहायता से न केवल मेरी सहायता ही की है अपितु मेरे उत्साह को भी बढ़ाया है जिससे की मैं इस महान ग्रन्थ की रचना करने में समर्थ हुआ । अतः उक्त दोनों महानुभावों को पुनरपि मैं बहुत २ धन्यवाद देता हूँ और प्रूफ आदि देखने की सहायता देने वाले पं० बुधप्रकाश शर्मा व पं० हरकेश दत्त शर्मा बिजनौर को भी धन्यवाद है।

मुझे बड़ा हर्ष है कि यह प्रस्तुत ग्रन्थ बड़े परिश्रम और उपरोक्त महानुभावों के परामर्शादि की सहायता से निर्माण होकर आज धीमान् (शिल्पी) ब्राह्मण जनता की सेवा में उपस्थित है, यदि इसको अपनाया गया और इसके प्रचार से लाभ उठाया गया तो मैं अपने परिश्रम को सफल मानूंगा ।

निवेदकः—उदयराम शर्मा

विश्वकर्म वंशीय शिल्पी ब्राह्मणों के लिये बडे २ धुरंधर विद्वानों की दी हुई व्यवस्था आदि का संक्षिप्त दर्शनः—

(१) शृंगेरी मठ के अधीश्वर महाराज शङ्कराचार्य के शिष्य श्री विद्या शङ्कर भारती जी अपनी व्यवस्था मिति श्रावण बदि ६ बुधवार शाके १६८२ में इन्हें ब्राह्मण वर्ण में बतला चुके है ॥ १ ॥

(२) कोल्हापुर के विश्वकर्म वंशीय स्वर्णकारों को मिति चैत्र बदि दोयज शाके १६७३ में श्री शङ्कराचार्य जी महाराज ने भी ब्राह्मण वर्णों की व्यवस्था दी है ॥ २ ॥

(३) श्री जनमेजय शाके २७३८ सुभानु नाम सम्वत्सर की पौह बदि १२ को श्री स्वामी बालकृष्ण भारती जी ने भी इन्हें ब्राह्मण वर्ण की व्यवस्था दी है ॥३॥

(४) मिति श्रावण शुक्ला २ विक्रम सम्वत् १८४५ तदनु-सार सिद्धार्थी नाम सम्वत्सर अर्थात् शालिवाहन शाके १७१० में काशी के विद्वानों द्वारा भी इन के ब्राह्मणत्व पोषक व्यवस्था निकली है ॥ ४ ॥

(५) शाके १७३८ में राज मुद्रांकित सहित इन शिल्पियों को हैदराबाद में भी ब्राह्मणत्व की व्यवस्था मिल चुकी है ॥ ५ ॥

(६) मद्रास प्रान्तर्गत वृन्दावन निवासी विद्वानों की सभा द्वारा माघ शुक्ला १० शाके १०६६ का विश्वकर्म वंशीय शिल्पियों को ब्रह्म कर्म के अधिकार होने की व्यवस्था मिल चुकी है ॥ ६ ॥

(७) श्रृंगेरी जगद्गुरु मठ के श्रीराम शास्त्री जी महाराज ने मिति मार्गशीर्ष शुक्ला ६ मङ्गलवार शाके १८२३ तदनुसार ता० १७ दिसम्बर सन् १६०१ ई० को पञ्चाल स्वर्णकारादिकों को ब्रह्म कर्मों की व्यवस्था प्रदान की है ॥ ७ ॥

(८) मद्रास राजधानी के घन पाटी लक्ष्मणाचार्य महाराज ने मिति मार्गशीर्ष शुक्ला ११ शनिवार शाके १८२३ तदनुसार २१ दिसम्बर सन् १६०१ ई० को रथकारादि शिल्पियों को ब्रह्मकर्म की व्यवस्था प्रदान की है ॥ ८ ॥

(९) श्रीमान् मारेमण्ड अकुर्वाचार्य जी महाराज १८ प्रकार के विश्वकर्मा वंशी शिल्पियों को रथकार मानकर उन्हें वेदाध्ययनादि अधिकार प्रदान करते हैं ॥ ९ ॥

(१०) श्रीमान कंदाड रामचन्द्राचार्य तथा राज्य मान्य पण्डित पुत्तूकस्तूरिपाद्ध रथकारादिकों को ब्राह्मण बतलाते हैं ॥ १० ॥

(११) तथा श्रीमान मारेमण्ड व्यङ्कटाचार्य इमानदार कदलीपुर रथकारादि शिल्पियों को उत्तम कुलीन ब्राह्मण बतलाते हैं । इत्यादि संक्षेप से जानना ।

ग्रन्थ कर्त्ता श्री पं० उदय राम शर्मा सिद्धान्त रत्न ।

॥ ॐ ॥

* भूमिका *

ओम् अभयं मित्रादभयम मित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्
अभयं नक्त मभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥

(अथर्व० का० १९ । सू० १५ । मंत्र ६)

सज्जन वृन्द ! बहुत समय से एक ऐसे ग्रन्थ की बड़ी आवश्यकता प्रतीत हो रही थी जिससे सर्वसाधारण जन भी अपनी वंश परम्परा को समझकर अपनी कुल मर्यादा का पालन कर सकें सम्प्रति शिल्पी ब्राह्मण विशेष उलझन में थे । कारण कि इन शिल्पी ब्राह्मणों को भ्रम में डालने और कर्तव्यभ्रष्ट करने के लिये "पण्डितम्मन्य" अज्ञानी नामधारी ब्राह्मणों ने अनेक युक्ति कार्य स्वार्थवश एवम् अपनी महत्ता प्रदर्शनार्थ तथा अन्य शिल्पी ब्राह्मणों को जनता की दृष्टि से दूषित करने के लिये लिखी साथ ही अनेक बृहत्मान्य ग्रन्थों में भी अपनी रचना मिला कर अपनी दूषित मनोवृत्ति का परिचय दिया है ।

ऐसा तो पक्षपातियों ने प्रायः सभी वर्णस्थ प्रचलित जातियों के साथ किया है। परन्तु विश्वकर्मा वंशी शिल्पी ब्राह्मणों के साथ विशेषता से यह भाव प्रकट किया है और अब भी कितने एक कृतघ्न देश-जाति-द्रोही वेद शास्त्र, इतिहास आदि ग्रन्थों और अनेक शास्त्रार्थों में विश्वकर्मा वंशी शिल्पी ब्राह्मण वास्तविक ब्राह्मण हैं । यह सिद्धान्त निश्चित हो जाने पर भी अपनी उस जघन्य वृत्ति का परिचय दिये बिना नहीं रहते।

कहीं व्याख्यानों में तो कहीं समाचार पत्रों में कहीं नई रचनाओं में और किसी प्रकार भी न हो सके तो सीधी सादी भोली भाली (इन नामधारी ब्राह्मणों पर अन्ध श्रद्धा रखने वाली) ग्रामीण जनता को बहका फुसलाकर "यह ब्राह्मण बन गये यह तुम्हारे पूज्य होजायगे यह तुम्हारे सरहाने बैठेंगे" आदि २ बातें बनाकर शिल्पी ब्राह्मणों के प्रति जनता में घृणा के भाव भरने में अपना गौरव समझकर नहीं चूकते और अहर्निश इन ही जोड़ तोड़ों में लगे रहते हैं।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए एक ऐसे ग्रन्थ की कि जिसमें विश्वकर्मा वंशीय शिल्पी ब्राह्मणों का प्रमाणिक वंश गोत्र, प्रवर, शासन, शिखा और सूत्र आदि का विस्तृत वर्णन हो, महती आवश्यकता थी।

यद्यपि इस दिशा में कुछ समय पूर्व श्री पं० आशाराम जी शर्मा B.A.L.T. ज्वालापुर ने थोड़ासा कार्य धीमान् ब्राह्मण पत्र में किया था किन्तु उस थोड़े से प्रयास से इतनी बड़ी आवश्यकता की पूर्ति न होसकी और नाहीं वे उसे किन्हीं कारणों से ग्रन्थ रूप में आगे प्रकाशित कर सके। इसके अतिरिक्त और कोई ग्रन्थ इस विषय का अभी तक नहीं दृष्टिगोचर हुआ। इस प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रचलित गोत्र शाखा (शासनों के) ५१२ नाम (अपभ्रन्श) उनके शुद्ध रूप किस ग्रन्थ के प्रमाण से शुद्ध किये उनके प्रवर कितने अर्थात कौन २ ऋषि हुए इत्यादि बातें विशेष महत्व की हैं। जो इस ग्रन्थ की उपादेयता को चार चांद लगा देती है।

इस ग्रन्थ को ग्रन्थकर्ता ने बड़े परिश्रम तथा गहरी खोज करके लिखा है। इस ग्रन्थ को पढ़ने से सहज ही समझ में आजाता है कि इसमें ६३ देसी विदेशी पण्डितों के लिखे प्रमाणिक ग्रन्थों के प्रमाण अंकित किये हैं। प्रमाण उद्धृत करते समय प्रमाणिक पुस्तक का नाम, प्रकरण, अध्याय आदि का पूरा पता दिया गया है। ग्रन्थ में १२ अध्याय और इन अध्यायों में शिल्पी ब्राह्मणों से सम्बन्ध रखनें वाली बातों को अच्छी तरह प्रमाणों द्वारा समझाया गया है। तथा धीमान्, ऋभु, रथकार, पंचाल, विश्वकर्मा ब्राह्मण, विश्वकर्मा वंशी ब्राह्मण, विश्वकर्मा जगत गुरु, आदि सभी आवश्यक बातों का समावेश है। ग्रन्थ की भाषा सुपाठ्य और विषय व्यापक तथा आवश्यक स्थलों में संस्कृत (ग्रन्थों) के प्रमाण दिये गये हैं। इस से इस ग्रन्थ का महत्व और भी बढ़ जाता है। किसी विद्वान ने कहा भी है कि:-

प्रायश्चित्तं चिकित्सा च ज्योतिषं जाति निर्णयम्।
विना शास्त्रेण यो ब्रूयात्तमाहुर्ब्रह्म घातकम् ॥

अर्थात- जो शास्त्र को बिना जाने ही प्रायश्चित्त बतलावे (शुद्धि करावे) या चिकित्सा करे अथवा गणित या फलादेश कहे अथवा किसी की वर्णव्यवस्था दे तो वह मनुष्य ब्रह्म घातक होता है। अतः शास्त्र का प्रमाण इस के गौरव को द्विगुणित करता है। संसार में सभी प्रकार के मनुष्य होते हैं कोई गुणों में भी अवगुण देखते हैं और द्वेष वश निन्दा करते रहते हैं,

किन्तु उन गुणों से लाभ नहीं उठाते, उनके सम्बन्ध में विद्वान् कवि का वचन ठीक ही है:–

नोलूकोप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्।

अर्थ– यदि उल्लूक दिन में नहीं देखता तो इसमें सूर्य का क्या दोष है। शास्त्रवेत्ता कहते हैं कि–

विद्वानेव विजानाति विद्वज्जन परिश्रम्।
नहि बंध्या विजानाति गुर्वी प्रसव वेदनाम्॥

अर्थ– विद्वान् के गुणों को विद्वान ही जानते हैं मूर्ख नहीं जानते, जैसे प्रसूता की पीड़ा को बन्ध्या स्त्री नहीं जान सकती॥

सारांश यह है कि मूर्ख जन विद्वानों के गुणों से लाभ नहीं उठाते और उलटी उनकी निन्दा करने में ही अपने को अहोभाग्य समझते रहते हैं।

इस विषय में महाकवि "बाण" लिखते हैं कि:–

निमित्तमुद्दिश्य हि यः प्रकुप्यति
ध्रुवं स तस्यापगमे प्रसीदति।
अकारणद्वेषपरो हि यो भवेत्
कथं जनस्तं परितोषयिष्यति

अर्थ– जिनका स्वभाव ही परनिन्दा करना है, उनका तो कुछ कहना ही नहीं। उनको किसी प्रकार भी सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता। मनुष्य तो क्या, ब्रह्मा भी उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर सकता, ऐसा भर्तृ हरि जी ने भी कहा है।

वास्तव में ऐसा कार्य अज्ञानी क्षुद्राशय ही किया करते हैं महाशय सज्जन गुण ही देखते हैं और व्यर्थ की निन्दा से भय खाते हैं।

अतः ऐसे दुर्जनों से बच कर शास्त्रज्ञप्ति करनी चाहिये और सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय करना चाहिए जिससे बुद्धि और संस्कार शुद्ध होकर लोक और परलोक में सुख हो। देशद्रोही, जातिद्रोही मनुष्यों से बचना चाहिये यदि कहीं संघर्ष हो ही जाय तो बातों का उत्तर शास्त्र-प्रमाणों से और शठता का उत्तर नीति से देना ठीक है।

मुझे इस ग्रन्थ को देखकर बड़ा हर्ष होता है और हृदय गद्गद् होजाता है कि इस जाति की एक बड़ी भारी आवश्यकता की पूर्ति पंडित जी ने अपनी इस वृद्धावस्था में और अस्वस्थता में भी की है।

मुझे आशा है और जनता से अनुरोध है कि वह इस ग्रन्थ की उपादेयता को समझकर इसे अपनावें और प्रत्येक घर में इसका स्वाध्याय कर मान करें। शिल्पी ब्राह्मण इस ग्रन्थ को श्रद्धा के साथ पढ़ें और इससे ज्ञान लाभ कर ग्रन्थकर्ता के परिश्रम को सफल बनावें।

ऋषिदेव शास्त्री आचार्य
नगीना

"श्रीमान् ब्राह्मणकुलादर्श" पुस्तक जिन ग्रन्थों के आधार पर रची गई है उनके नाम निम्न प्रकार हैं:—

१ ऋग्वेद
२ यजुर्वेद
३ कृष्णयजुर्वेद-एशियाटिक-सोसाइटी कलकत्ता ।
४ अथर्ववेद ।
५ वैदिक निघण्टु ।
६ निरुक्त ।
७ ऐतरेय ब्राह्मण ।
८ गोपथ ब्राह्मण ।
९ बृहदारण्यक उपनिषद् ।
१० ईश्वरीयज्ञान-गुरुकुलकांगड़ी ।
११ बृहज्जाबालोपनिषद् ।
१२ कैवल्योपनिषद् ।
१३ तैत्तिरीय संहिता ।
१४ काण्व संहिता
१५ वेदतत्व प्रकाश जातिनिर्णय
१६ गार्ग्यागम ।
१७ कपिलगीता ।
१८ भगवत गीता
१९ गोत्र प्रवरनिबन्ध कदम्ब
२० प्रवर मंजरी ।
२१ प्रवर दर्पण ।
२२ बोधायनोक्त गोत्र कांड
२३ आश्वलायनोक्त गो० कां०
२४ कात्यायनोक्त गोत्र कांड
२५ आपस्तम्बोक्त गोत्र कांड
२६ पाणिनीय प्रणीत गोत्रकांड
२७ महाप्रवराध्याय ।
२८ श्रीमान् ब्राह्मण मा० पत्र
२९ विश्वकर्मा और उसकी संतान एलफडएडवर्डरावर्ट संकलन
३० श्रीमान् ब्राह्मणवर्णमीमांसा
३१ श्रीमान् ब्राह्मण परिचय ।

३२ विश्वकर्म वंश भास्कर ।
३३ विश्वब्रह्म कुलोत्साह ।
३४ पंचाल ब्राह्मण निर्णय ।
३५ ब्राह्मण निर्णय ।
३६ विश्वकर्मवंशीयब्रा० वर्णव्यवस्था
३७ वास्तुलक्षण लक्षण ।
३८ विश्वकर्मा प्रकाश
३९ चरणव्यूह ।
४० कौशलागम ।
४१ सकलाधिकार ।
४२ जाति भास्कर ।
४३ शैवागम ।
४४ ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तंड ।
४५ पूर्व मीमांसा शबर भाष्य
४६ मत्स्यपुराण ।
४७ महाभारत ।
४८ ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका ।
४९ विश्वकोष हिन्दी-कलकत्ता ।
५० शब्द चिन्तामणि (कोष)
५१ अमर कोष ।
५२ मनुस्मृति
५३ हारीतस्मृति ।
५४ वायु पुराण ।
५५ विष्णु पुराण ।
५६ वाराह पुराण ।
५७ विश्वकर्मपुराण ।
५८ मूलस्तम्भ पुराण ।
५९ विश्वब्रह्म पुराण (पूना)
६० विश्वकर्मा महापुराण
६१ जैन आदि पुराण ।
६२ स्कंद पुराण नागर खण्ड गवर्नमेंट ओरियण्टल लाइब्रेरी (मद्रास)
६३ वेदसार रत्न ।

इत्यादि इन ६३ ग्रन्थों के आधार से यह "श्रीमान् ब्राह्मण कुलादर्श" नामक ग्रन्थ निर्माण किया गया है ।

विषयनुक्रमणिका संक्षेप से

—:०O०:—

—०००—

❀ शुद्धाऽशुद्ध पत्रम् ❀

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१५	तथा	चैव
२	१४	हीनः	हीनो
२	१५	त्व	सत्व
,,	,,	मिया	भिया
३	१६	विषव	विवप
७	५	चक्र्	चक्र्
१५	११	धीमात	धीमान्
२२	१८	दर्वाऽपि	दर्वीऽपि
,,	,,	बाधका	बोधकाः
२४	१५	दिव्याभरण	दिव्याभरण
३१	७	ब्राह्मणस्तपरा	ब्राह्मणस्त्वपरा
३२	२१	सुरर्कशिल्पिनो	सुरशिल्पिनोः
,,	,,	मा० ३।४०६	भावार्थ व० ३।१०८
३७	१६	वेदों का	वेदों को
४६	८	ऋषयाये	ऋषयोये
४७	१४	देव	देवैर्वक्षिया
४८	४	कनिष्ठचतुरस्रक	कनिष्ठ प्राह चतुरस्रक
,,	१२	तदैव चतुष्क०	तदवरः कनिष्ठो वाजवचतुरः कर चतुर्थाकरखामित्याह तदेवचतुष्करण

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४६	११	भम	भीम
५०	२१	विश्वकाय	विश्वब्रह्म
५१	३	विश्वकर्मा,का	विश्वकर्मा को
५२	७	द्वारकाय	द्वाराकार्य
५३	१२	वधमाना	वर्धमानाः
,,	२१	रूपेण०	रूपेण तस्मैनमः
५४	१२	शिल्पयज्ञ	शिल्प यज्ञ
५४	१५	विश्वकम	विश्वकर्म
,,	,,	वंशीर्य	वंशीय
५७	१५	भार्द्वाजा	भरद्वाजाः
६१	१७	शिल्पों	शिल्पियों
६४	६	तीरे	तीसरे
६४	११	वंशाय	वंशीय
६५	२	चायायन	बोधायन
६५	४	ब्राह्मणस्मृताः	ब्राह्मणस्मृताः
६६	१०	यज्ञाकार्य	यज्ञकार्य
७४	५	पूर्वक वंश ४	पूर्वक वंश ५
६४	२	धार्वाय	धात्वार्थ
६४	५	विशाष	विशेष
६७	४	प्रजापीत	प्रजिपीत

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०५	४	मधरायण	मंधरायण
१०७	१८	पयदश्व	पृषदश्व
११०	५	वसिष्ठ ३१	वसिष्ठ २७
१११	१०	कुशिक ३९	उद्दालक ३६
११२	७	वसिष्ठ २१	वसिष्ठ २७
११५	१	वागागि	वागागि
"	११	विधि	विधि
"	१२	त्रिकश्चक	त्रिकश्चक
११६	४	मथण	मर्थण
१२०	११	रवैरैवा	रैवरैवा
१२१	१४	वारवर	वीरवर
१२७	११	भागर्व	भार्गव
"	"	श्राप्रवान	श्राप्नवान
१२८	"	शौनकायन	शौनकायनी
१२६	२	चाक्षा	चोक्षा
"	१२	निवसया	निवसैया
"	"	पलया	पलिया
१२६	१८	भागव	भार्गव
१३०	"	वावन	श्यावन
	४	भागव	भार्गव
१३१	१५	कवल	कवलम

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३१	१३	शिगिल	शिंगिल
"	२१	गर्गालस	गार्गालस
१३१	११	माही	मोही
१४१	२	रैव	जैबाल
१४४	१२	सांबाल्न	सांबात्र
१४६	१७	ग्रत्री	अत्र
१५२	१६	हृतश्वदच	कृतध्वदच
१५३	१६	भर	भरद्वाज जी
१५४	६	सहत्र स्वत्सर	सहस्त्र वत्सरं
१५५	८	जतो	जातो
	१३	पुरुवो	पुरुवो
१५६	१७	०	और मथन करने से पैदा हुआ इस वास्ते मैथिल नाम भया

दिनेश प्रेस, देवबन्द

॥ ओ३म् ॥

श्री स्वामी जी का संक्षिप्त परिचय

आर्य सन्यासी ।

पूज्य पाद वीतराग श्री दयानन्द सरस्वती जी महाराज भारत की एक उज्ज्वल विभूति हैं, इनकी वाणी, कर्मठता तथा समाज सेवा की लगन बहुत ही सबल और यशोमयी है । इनका जन्म उत्तर-प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले के अन्तर्गत ग्राम खुड्डा में ब्राह्मण वंश में हुआ था, आपके पिता जी का नाम शंकर देव तथा माता जी का नाम परसी देवी था । आपको बचपन से ही धार्मिक कार्यों में अत्यन्त रुचि थी । बचपन में भी आप दूसरों का अच्छा कार्य देख कर अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव करते थे । बड़े होने पर आपका विवाह एक आर्य कन्या देवी दयावती से हुआ; जिनसे आपके दो पुत्री तथा एक पुत्र-रत्न उत्पन्न हुआ जिनका नाम श्री निर्मोही शास्त्री जी हैं तथा पुत्रियों का नाम प्रकाशवती आर्या तथा वेदवती आर्या है । आपने वैदिक रीति के अनुसार गृहस्थ जीवन में अपनी कर्मठता तथा लगन से पुत्र तथा पुत्रियों को योग्य बनाकर उनका वैदिक रीति के अनुसार विवाह संस्कार किया । इनके पुत्र निर्मोही शास्त्री जी एक डिग्री कालेज में प्रवक्ता है ।

आप गृहस्थी होते हुए भी वानप्रस्थियों जैसा जीवन बिताते थे । अब मौका मिलते ही पुत्र के भी पुत्र उत्पन्न होने पर वैदिक धर्मानुसार श्री पूज्यवर वीतराग श्री अमर स्वामी महाराज जी से अपने ५० वर्ष के उपरान्त ही इस तारीख में ६, ७, ८ जून सन् १९६८ में आपने सन्यास की दीक्षा ली ।

आपके अथक परिश्रम तथा लगन के कारण ही पं० उदय राम शर्मा जी द्वारा रचित विश्व कर्मा वंश भास्कर का पुनरुद्धार हो सका है। विश्व कर्मा वंश गोत्रावली तथा ये रंग-बिरंगे फूल जो बिखरे थे नामक पुस्तकों का पुनरुद्धार भी पूज्य पाद श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के सतत प्रयत्नों का ही फल है। आप मानव मात्र के कल्याण के प्रति सतत प्रयत्नशील है। आप से धार्मिक जगत को बड़ी आशाएं हैं। सच्चे हृदय से, पूर्ण लगन से और निरंतर पुरुषार्थ करके मनुष्य क्या-२ कर सकता है। इसका उत्तर आपके जीवन से हमें प्राप्त होता है। सन्यास आश्रम में प्रवेश करके आप मस्ती की चाल से आगे बढ़ रहे हैं।

आप कुछ साधारण ही पढ़े-लिखे हैं किन्तु स्वाध्यायशील है।

आपका आश्रम का पता:-

आर्य साधू आश्रम खुड्डा,

पो०- खास, जि०- मुजफ्फर नगर (यू० पी०)

कृपा शंकर शर्मा शास्त्री
साहित्य रत्न
नई मण्डी, मुजफ्फर नगर
२३-६-६६

॥ ॐ ॥
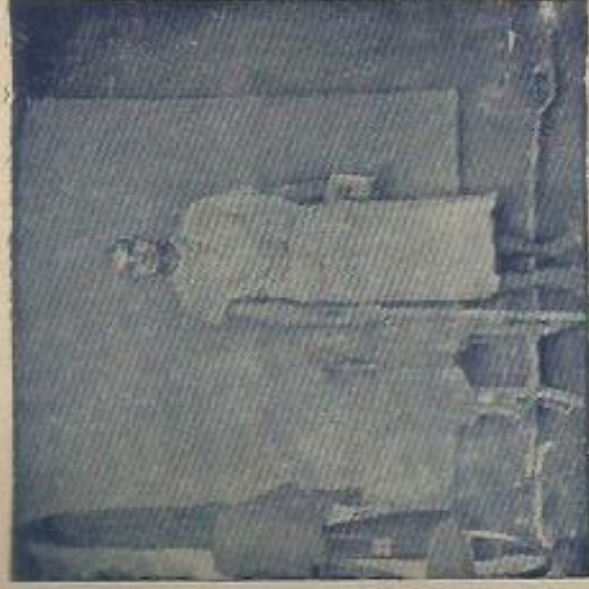
पूज्यवर श्रीयुत आर्य सन्यासी

दयावन्त सरस्वती जी महाराज

आर्य साधू आश्रम खुड्डा पो० खास

जि० मुजफ्फरनगर

॥ ॐ ॥

❀ ओ३म् ❀
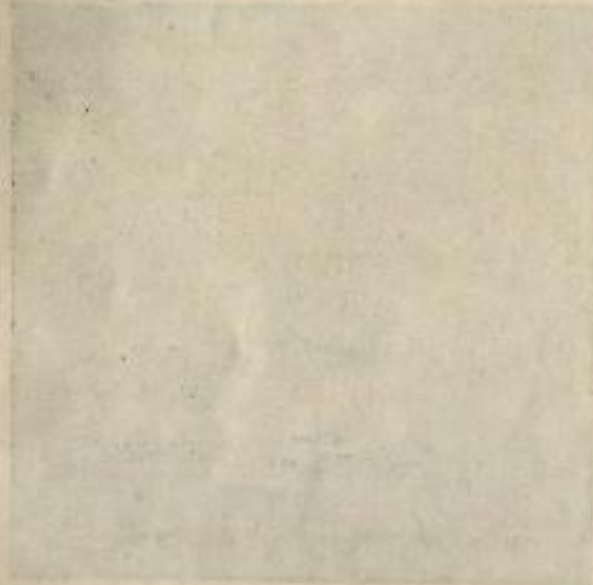
॥ श्री विश्वकर्मणे नमः ॥

धीमान् ब्राह्मण कुलादर्शः

अर्थात्

❀ गोत्र प्रवरादर्श ❀

अथ प्रथमोऽध्यायः

मंगलाचरणम्

प्रणम्य विश्वकर्माणं ब्रह्माणं सर्वतोमुखम् ।
कोटिसूर्य्याधिकाभासं कोमलामलविग्रहम् ॥१॥
शास्त्रेभ्यो सारमादाय सर्वेषां हितकाम्यया ।
धीमान्विप्रकुलादर्शोग्रन्थोऽयं क्रियते मया ॥२॥
अस्य स्वाध्यायमात्रेण वंश्यानां विश्वकर्मणः ।
धीमान् शब्दमहत्वञ्च कुलमाचारमेव च ॥ ३ ॥
वेदशाखाशिखासूत्रं गोत्रप्रवरशासनम् ।
ज्ञातिवृत्तान्तकं तथा सर्वज्ञानं भविष्यति ॥ ४ ॥

अर्थ-जिसका जगत् रूप देह कोमल और अमल ऐसा है
था जो करोड़ों सूर्य्यों से अधिक प्रकाशमान है और जिस

का मुख अर्थात् ज्ञान सर्वत्र है उस सृष्टि कर्त्ता सब के स्वामी विश्वकर्मा ब्रह्मा को प्रमाण करके वेदादि शास्त्रों से सार रूप प्रमाण लेकर सबके हितार्थ मैंने इस "धीमान ब्राह्मण कुलादर्श" नामक ग्रन्थ को निर्माण किया ॥१,२॥ जिसके पढ़लेने मात्र से ही विश्वकर्म वंशीय शिल्पी ब्राह्मणों के धीमान् शब्द को महत्ता, कुल के आचार वेद, शाखा, शिखा, सूत्र, गोत्र, प्रवर, शासन तथा जातीय वृत्तान्तादि का समस्त ज्ञान हो जावेगा ॥३,४॥

जातीय वृत्तान्त जानने की महत्ता

द्विजन्मानो भवेयुस्ते स्वात्मवृत्तान्तवेदिनः ।
आत्मनो ज्ञातिवृत्तान्तं यो न जानाति सत्पुमान् ॥ १ ॥
ज्ञातीना समवायार्थं पृष्टः सन मूकतां भवेत् ।
हीनः भवेत्स सम्मानात् दिवामध्ये शशी यथा ॥ २ ॥
तस्मादत्र संधानमिथा भव्यत्वहेतवे ।
आत्मनः सर्ववृत्तान्तं विज्ञं यमिवमादरात् ॥ ३ ॥

अर्थ-जो अपने वंश (जातीय) वृतान्त को जानता है वही द्विजन्मा पद का अधिकारी होता है। और जो सत्मनुष्य अपने अपने जातीय वृतान्त को नहीं जानता

है ॥१॥ तो उसको जातीय विषयक प्रश्नों में चुप रहना पड़ता है और वह अपने सम्मान से ऐसा हीन होजाता है जैसे कि दिन के मध्य सूर्य के प्रकाशसे चन्द्रमा लज्जित होजाता है ॥२॥ इसलिये कि अपनी और अज्ञानता रूप दोष आवेगा इस डर से और जातीय विषय को जानने में महत्ता होगी इस हेतु से अपनी जाति के समस्त वृत्तान्त को अच्छे प्रकार जानना चाहिये। ॥३॥

(३) अर्थ धीमान् शब्द ।३।

धीरो धीमन् ॥

(निरुक्त । अ० ३ खण्ड १२)

अर्थात् धीर धीमान् को कहते हैं-(यास्काचार्य कृत भाष्य)

क्योंकि:—

'धी' शब्द से ही धीर तथा धीमान् यह दोनों शब्द बने हैं। 'ध्यै' धातु से 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इस सूत्र से क्विपप्रत्यय कर 'ध्यायते सम्प्रसारणञ्च' इस से सम्प्रसारण करके 'क्विप्' प्रत्यय का लोप और 'कृदन्त त्वात' इससे प्रातिपदिक संज्ञा कर और 'सु' प्रत्यय लगाने से 'धी' शब्द बनता है।

'धी' शब्द से ही धीर वा धीमान बना है। ,धियमी रयतीति धीरः'। धी+ईर। जो 'धी' (बुद्धि) को प्रेरणा करे अर्थात् अपनी 'धी' (बुद्धि) पर जोर दे उसको धीर कहते हैं।

'धी' शब्द से 'मतुप' प्रत्यय करने पर धीमान् बनता है।

(धी+मतुप) धीर और धीमान शब्दों में इतना ही अन्तर है जितना कि 'धनी' 'धनवान' 'धनवन्त' 'धनाड' आदि हिन्दी के शब्दों का आपस में अन्तर है।

जैसे धनी, धनवान, धनवन्त और धनाड आदि शब्द इस कारण एक ही है कि इनकी प्रकृति (मुख्य अङ्ग) धन शब्द एक ही है। इसी प्रकार धीमान् और धीर शब्दों का प्रधान अङ्ग 'धी' भी एक ही है इस वास्ते यह भिन्न नहीं हो सकते।

धीर तथा धीमान् शब्द प्रत्यय भेद के कारण ही भिन्न नजर पड़ते हैं जैसे कि कुए का पानी गोल और नहर का पानी लम्बा नजर आता है। अतः धीर और धीमान् शब्दों को भिन्न २ बतलाना ऐसा ही है जैसे कोई कहे कि कुए का पानी नहर के पानी से भिन्न है।

पाठकों को जानना चाहिये कि संस्कृत भाषा में प्रकृति और प्रत्यय के योग से शब्द बनते हैं। एक ही प्रकृति में अनेक प्रत्यय लग जाने पर उसके भिन्न भिन्न रूप बन जाते हैं। यह बात हम धीमान् शब्द की प्रकृति "धीमत्" के उदाहरण से ही समझाते हैं।

'धीमत्' में 'सु' प्रत्यय लगाने पर धीमान् पद बनता है, और "औ" प्रत्यय लगाने पर "धीमन्तौ" अर्थात् (दो धीमान्) पद बनाता है, जस् प्रत्यय लगाने पर धीमन्तः (बहुत धीमान्) पद बन जाता है।

इस प्रकार एक ही धीमत् प्रकृति के अनेक रूप बन जाते हैं एक ही अर्थ में भी अनेक प्रत्यय संस्कृत में लगते हैं। जैसे कि-भाव में 'गम्' धातु से 'क्तिन्' प्रत्यय लगाने पर 'गति' पद बनता है। 'क्त' प्रत्यय लगाने पर 'गतः' पद बनता है। ल्युट् प्रत्यय लगाने पर 'गमनम्' पद बनता है। तीनों पदों अर्थात 'गति'- 'गतः'- गमनम् के अर्थ प्राय एक ही हैं अर्थात जाना या चलना। क्योंकि तीनों पद एक ही धातु से बने हुए रूप हैं। इसी प्रकार धीर और धीमान् शब्दों का एक ही "धी" पद प्रधान अंग है प्रत्यय के भेद से अलग-२ अर्थ होने पर भी सामान्यतः मूल में एकार्थ वाची ही हैं।

यही कारण है कि वेद के सब भाष्यकार धीर पद के सब जगह धीमान् अर्थ ही करते हैं यथा:—

कइछन्दसां योग: मावेद धीर: (ऋ०।१०।१०।११४।९)
यहां प' आये हुये धीर पद का अर्थ सायणाचार्य जी धीमान् ही करते हैं— 'धीरो धीमान्'

त धीरा: वाचा प्रणयन्ति । (ऋ०।१०।१०।११४।७
धीरा: धीमन्त: (धीमान् लोग) सायण भाष्य
धीरा: मनसा वाचमक्रत । (ऋ० १०।६।७१।२)
धीरा: = धीमन्त:(अर्थात् धीरा: = धीमान् लोग) सायणभाष्य
कृण्वन्ति विदथेषु धीरा: (यजु: ।३४।२)
यहां उव्वटाचार्य लिखते हैं— धीरा: धीमन्त:

यहां महीधर आचार्य लिखते हैं धीरा: = धीमन्त: धीर्विद्यते येषां ते धीरा: "कर्मण्यण्" सूत्र (पा० ३।२।१) अर्थात् धीर धीमान को कहते हैं। धी जिसके हो उसको धीर कहते हैं। उपर्युक्त "कर्मण्यण्" सूत्र से धीर शब्द की सिद्धी होती है।

धीरा: देवेषु सुम्नया (यजु०।१२।६७)
यजुर्वेद के इस मन्त्र का भाष्य करते हुए उव्वटाचार्य और महीधर दोनों लिखते हैं—

धीरा: धीमन्त: अर्थात् धीरा = धीमान लोग।

...षु रत्नमभजन्त धीरा: । (यजु० ।१६।५२)

यहां उव्वटाचार्य तथा महीधर दोनों अपने २ भाष्यों में लिखते है—धीरा: धीमन्त: । अर्थात् धीरा धीमान लोगों को कहते है।

प्रक् पवमान: धीरा (यजु० ।१६।५३)

यहां पर भी उव्वट और महीधर दोनों लिखते है धीरा धीमन्त: ।

इत्यादि प्रकार से सब आचार्य सब जगह धीर के अर्थ धीमान ही कहते हैं इससे इन दोनों पदों का एक होना स्पष्ट रूप से सिद्ध है। (धीमान् ब्राह्मण मीमांसा)

धीमान शब्द ब्राह्मण वर्ण का बोधक पंडित के अर्थ में आता है जैसे कि अमरकोश के ब्रह्म वर्ग। कांड २ के श्लो०५,६ में पंडित के २२ नामो में धीर तथा धीमान नाम भी लिखे मिलते हैं:—

विद्वान् विपश्चिद्दोषज्ञः सन्सुधीः कोविदो बुधः।
धीरो मनीषीज्ञः प्राज्ञः संख्यावान्पण्डितः कविः॥
धीमान्सूरिः कृती कृष्टिर्लब्धवर्णो विचक्षणः।
दूरदर्शी दीर्घदर्शी श्रोत्रियश्छान्दसौ समौ॥ ५, ६॥

अर्थ—विद्वान् विपश्चित्, दोषज्ञ, सत्, सुधी, कोविद, बुध, धीर, मनीषिण, ज्ञः, प्राज्ञ, संख्यावत्, पण्डित, कवि, धीमान्, सूरि, कृतिन्, कृष्टि, लब्धवर्ण, विचक्षण, दुरदर्शिन्, दीर्घदर्शिन, श्रोत्रिय और छान्दस यह सब नाम पण्डित के और एकार्थ वाची हैं। अतः धीमान् शब्द ब्राह्मण का वाची है तथा पण्डित के अर्थ में आता है, इत्यादि संक्षेप से जानना।

(४) धीमान् शब्द की कुछ विशेषतायें

धीमान् शब्द सच्छास्त्रोक्त है और मेधा (बुद्धि) वाचक, प्रमुख उत्तम ब्राह्मण के लिये ही प्रयुक्त किया गया है तथा 'धीमान्' यह परम पुनीत पद महर्षि श्री भगवान् विश्वकर्मा की सतति मात्र के लिये शास्त्रों में प्रयुक्त हुआ है, स्वतन्त्र है अर्थात् मुख्य है। कोई गौणिक नहीं है।

जैसे कि गौड देश में उत्पन्न होने वा वहां से निकास होने के कारण 'गौड ब्राह्मण' कन्नौज में उत्पन्न होने वा वहां से निकास होने के कारण 'कन्नौजिया ब्राह्मण', सरस्वती नदी के तट पर उत्पन्न होने वा वहां

से निकास होने के कारण 'सारस्वत ब्राह्मण', सरयू नदी के तट पर उत्पन्न होने वा वहां से निकास होने के कारण 'सरयूपारी ब्राह्मण' आदि २ की भांति 'धीमान् ब्राह्मण' देश विशेषवाचक वा नदि आदि वाचक गौण शब्द नहीं है अपितु यह विज्ञानमय सार्थक मुख्य पद है।

तथा मथुरा में उत्पन्न होने वा वहां से निकास होने के कारण 'मथुरिया' तथा रामगढ़ में उत्पन्न होने वा वहां से निकास आदि होने के कारण 'रामगढ़िया' आदि शब्द सभी वर्ण उपवर्णों के लिये मिश्रित (जिसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, चमार, भङ्गी, कञ्जर, चोर डाकू, सदाचारी, व्यभिचारी, व्यवसायी और व्यापारी आदि सभी प्रकार के लोगों को प्रकट करने वाला) शब्द है। किसी वर्ण उपवर्ण विशेष का द्योतक नहीं किन्तु 'धीमान् ब्राह्मण' शब्द एक पर पुनीत उत्कृष्ट ब्राह्मण पद का द्योतक है।

तथा लोहकार (लुहार), वर्धकि—(बढ़ई या तरखाण), कान्सकार या कसेरा आदि २ व्यवसाय वाची शब्द हैं वर्णवाचक नहीं, किन्तु धीमान् ब्राह्मण परम पुनीत ब्राह्मणवाचक शब्द है।

तथा 'विश्वकर्मा' व्यक्ति विशेष का, विश्व-ब्राह्मण

समस्त विश्व का, मैथिल, ककुहास आदि देश विशेष के 'आज्ञड' औषधि विशेष का और रामगढ़िया नगर विशेष आदि के वाचक नाम हैं। वर्ण या उपवर्ण वाचक नहीं, किन्तु 'धीमान ब्राह्मण' सच्छास्त्र सिद्ध स्वयं स्वतन्त्र मूल ब्राह्मण वाचक है इत्यादि। यह 'धीमान शब्द की विशेषतायें संक्षेप में ही जानना।

धीमान् शब्द की महत्ता

धीमान् (सं० पु०) १ धीमान् बुद्धिमान, समझदार २ बृहस्पति ३ जारेन्द्रवासी एक विख्यात भास्कर शिल्पी ॥८॥ [विश्वकोष हिन्दी, भाग ११ पृ० २२२]

अर्थात् जो बुद्धिमान् समझदार आचार्य अर्थात् पुरोहित तथा देवताओं में निवास करने वाला एक प्रसिद्ध भास्कर शिल्पी है उसे धीमान् कहते हैं।

[धीमान शब्द की व्युत्पत्ति देखो, "विश्वकर्म वंश भास्कर" अध्याय ८] ॥ ८ ॥

तथा धीमान् (पु०) बृहस्पतौ। विपण्डिते। धीर्विद्यते यस्य। मतुप्। ऊहापोह कुशले ॥ ९ ॥

[शब्दार्थ चिन्तामणि (कोष) पृ० १२०९, श्री सुखानंद नाथ कृत]

अर्थात धीमान् शब्द के अर्थ बुद्धिमान, गुरु तथा पण्डित के होते हैं। धीर्विद्यते यस्य अर्थात् जिसमें

विशेष बुद्धि हो उसे धीर वा धीमान् कहते हैं। इसी प्रकार यास्काचार्य ने भी निरुक्त के अ० ३ खण्ड १२ में 'धीरो' धीमान् अर्थात धीर शब्द का अर्थ धीमान् ही किया है। इतना ही नहीं बल्कि उपरोक्त वाक्य में धीमान् को ऊहापोहकुशल भी कहा गया है जिसका अर्थ यह होता है कि जो किसी के उपदेश किये बिना ही अपने पूर्व जन्म के संस्कारों से तत्व को अपने आप विचार कर शिल्पीय पदार्थों की नवीन २ रचना करने में कुशल हो उसे धीमान् कहते हैं।

[और देखो विश्वकर्म-वंश-भास्कर अ० ६] ॥ ९ ॥

तथा—अप:, क्रतु, धी, शिल्पम् ॥ १० ॥

[वैदिक निघण्टु अ० २]

अर्थात् धी और शिल्प शब्द एकार्थ वाची हैं। अत: बुद्धिमय उच्चकोटि के शिल्प को करने वाले शिल्पी ब्राह्मण का नाम धीमान् होता है ॥ १० ॥

क्योंकि—

धीर्ध्यानं ध्यायतेर्योगाद् ध्यानवद्रचनात्मकम्।
शिल्पं धीरुच्यते विप्र: शिल्पी धीमान् तत: स्मृत: ॥११॥

[धीमान् ब्राह्मण पत्र, मास जौलाई सन् १९२४, अ० ४]

अर्थ—धी शब्द ध्यै धातु से बना है। अत: इस के अर्थ ध्यान के होते हैं। वह शिल्प जिससे नई नई

चीजों की रचना की जाती है ध्यान बिना हो ही नहीं सकती। इस कारण ऐसा शिल्प धी (ध्यान) नाम से ही पुकारा जाता है और इस धी अर्थात ध्यानरूप शिल्प को करने वाले ब्राह्मण शिल्पी का नाम धीमान् कहलाता है। यथा—

एवं दीक्षितआचार्य, पञ्चशिल्पिविचक्षण:।
लोकोपकारकृद् धीमान् जीवेच्च शरद: शतम् ॥१२॥

[मूलस्तम्ब विश्व ब्रह्म पुराण]

अर्थात् इस प्रकार की दीक्षा लिया हुआ आचार्य जो कि पांच प्रकार के शिल्पों के करने वाले शिल्पियों में पण्डित है वह लोकों का उपकार करने वाला धीमान् सौ वर्ष जीवित रहे। यह है धीमान् शब्द की महत्ता। ॥ १२ ॥

पांच शिल्प—

ऋभवो दारुकाराश्च ताम्रकारास्तथैव च।
अयस्कारा: स्वर्णकारा: शिलाकाराश्च पञ्चधा ॥१३॥

[पञ्चा० ब्रा० नि० ध्या० ३१]

अर्थ—(ऋभव:) धीमान् शिल्पी ब्राह्मणों के लकड़ी, तांबा, लोहा, सोना और पत्थर का काम यह पांच प्रकार के शिल्प हैं जो कि ऊपर कहे हैं (।

इन पांच प्रकार के शिल्पों के कर्ता होने से धीमान्

ब्राह्मणों को पञ्चाल भी कहा जाता है। जैसे कि—
पञ्चभि: शिल्पै: अलन्ति भूषयन्ति जगत् इति पञ्चाला: अर्थात पांच प्रकार के शिल्पों से जगत् को भूषित करने वाले धीमान् शिल्पियों को पञ्चाल कहते हैं, अथवा पञ्चभ्य: शिल्पेभ्य: अलम इति पञ्चाला: अर्थात् पांच शिल्पों के कर्ता होने से शिल्पी धीमान् ब्राह्मणों को पञ्चाल कहा जाता है ॥ १३ ॥

इसी प्रकार कोशलागम के अ० ३ में भी कहा है

शिल्पी ब्राह्मण नामान: पंचाल परिकीर्तिता: ॥१४॥

अर्थात-शिल्पी (धीमान्) ब्राह्मणों का नाम पंचाल है॥१४

इत्यादि प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि:—

शिल्पी ब्राह्मण नामान: धीमन्त: परिकीर्तिता:।
पंचशिल्प रताश्चैतान् पंचालाश्चापि कथ्यते ॥१५॥

अर्थात—शिल्पी ब्राह्मणों का नाम धीमान् है और पांच प्रकार के शिल्पों के कर्ता होने से.. उन (धीमानों) को पंचाल भी कहते हैं। जिस प्रकार यहां धीमान् ब्राह्मणों को पांच प्रकार के शिल्पकर्म करने से पंचाल कहा गया है, इस ही प्रकार रथादि विमानों की रचना करने से वेद में इनको धीमान् तथा रथकार के नाम से ही उच्चारण किया गया है ॥१५॥

यथा:—

ये धीवानो रथकाराः कर्मारा: ये मनीषिण: ।
उपस्तीन् पर्णमह्य त्वंसर्वान् कृण्वभितो जनान् ॥१६॥

(अथर्ववेद का० ३। अ०१।सू०५।मंत्र ६

अर्थ-इस मंत्र में राजा ईश्वर से यह याचना करता है कि (ये) जो (रथकारा:+धीवान:) रथादि विमानों के बनाने वाले रथकार धीमान लोग हैं तथा (ये) जो (कर्मारा:+मनीषिण:) लोहा आदि का काम बनाने वाले लोहकार धीमान लोग हैं (पर्ण) हे ईश्वर (त्वम्) तू (सर्वान्+जनान्) इन सब लोगों को [मह्यम्] मेरे [अभित:] चारों ओर [उपस्तीन] बैठा हुआ [कृणु] कर इस प्रकार इस मंत्र में शिल्पियों को स्पष्ट रूप से रथकार तथा धीमान ही कहा है] ॥१६॥

[७] ऋभु रथकार धीमान ब्राह्मण है:—

ऋभवश्च रथकारा: ॥१७॥ पूर्वमीमांसा, ६। १।५०

शबर भाष्य

अर्थात् यहां रथकारों [धीमानों] को ऋभु के नाम से ही उच्चारण किया गया है और वैदिक निघण्टु में ऋभु को ब्राह्मण तथा धीमान नाम से ही याद किया है ॥ १७ ॥ यथा—

विप्र:, धीर:, ऋभु:, विपश्चित् इत्यादि चतुर्विन्शति, मेधावी नामानि ॥१८॥ वैदिक नि०, अ० ३ खं० १५

अर्थ— [विप्र:] ब्राह्मण [धीर:] धीमान् [ऋभु] रथकार [विपश्चित्] पण्डित इत्यादि २४ मेधावी ब्राह्मणों के नाम हैं। इससे यह स्पष्ट हो गया कि ऋभु [रथकार] शिल्पी धीमान् ब्राह्मण है ॥१८॥

धीमान् ब्राह्मण के लिये लिखा है कि वह घर आदि निर्माण करने के समय—

गृहाणि पातयेद्धीमानेषां दण्डव्यधान्तरे ।

वास्तुप्लवलक्षणं श्लोक ३१२

अर्थात लकड़ी के गज से भूमि को मापकर धीमान ब्राह्मण घर आदि बनाने का विधान करे।

दीर्घे दीर्घं गृहा कुर्याद् वृत्तवृत्तांस्त्रिकोणके ।
त्रिकोणान् कारयेद्धीमान्स्वबुद्धयाश्च तथैव च ॥

विश्वकर्मप्रकाश, अ० ११। ७८

अर्थात् धीमान् (ब्राह्मण) को चाहिये कि वह अपनी बुद्धि से बड़ी जगह बड़ा मकान बनावे, यदि जगह गोल हो तो गोलाईदार मकान बनावे तथा इसी प्रकार तिकोनी जगह तिकोना मकान बनावे।

यहां रथकार अर्थात शिल्पी ब्राह्मण को स्वतन्त्र रूप से ही धीमान् नाम से उच्चारण किया गया है।

तथा (६) धीमान् शिल्पियों के लिये यज्ञ में निमन्त्रण—

रथं ये चक्रुः सुवृतं सुचेतसोऽविह्वरन्तं मनसस्परिध्यया ता ऊन्वस्य सवनस्य पीतय आवो वाजा ऋभवो वेदयामसि ।।

ऋग्वेद मण्डल ४ सूक्त ३६ मन्त्र २

अर्थ—(ये सुचेतसः) जो शुद्ध अन्तःकरण वाले (मनसः परिध्यया) मन से ध्यान करके (सुवृतम्) अच्छे पहियों वाले (अविह्वरन्तम्) साधे सच्चे (रथं चक्रुः) रथ को बनाते हैं, (वाजाः ऋभवः) हे ज्ञानी ऋभुवो ! रथकारो अर्थात् धीमान् शिल्पियो ! (तान्ऊवः) उन आपको (अस्य सवनस्य) इस यज्ञ में सोम रस के (पीतये) पान करने के लिये (आवेदयामसि) निमन्त्रण देते हैं ।

इस वेदमन्त्र में यज्ञ में निमन्त्रण पाने वाले ऋभु का तात्पर्य रथकार शिल्पी अर्थात धीमान् ब्राह्मण से है । यह बात नीचे लिखे वेदमन्त्र से भी स्पष्ट रूप से सिद्ध है । यथा—

ऋषिविप्रः पुर एता जनानामृभुर्धीरः ।।

ऋ० ६ । ८७ । ३

अर्थात् (ऋभुः) रथकार अर्थात् शिल्पी है, (धीरः) धीमान् है (विप्रः) ब्राह्मण है (ऋषिः) वेदार्थ का वक्ता है तथा (जनानां पुर एता) जनता का नेता है ।

तात्पर्य यह है कि वैदिक समय में रथकारों (शिल्पियों) को ऋभु, धार, धीमान् तथा विप्र (ब्राह्मण) नाम से ही उच्चारण किया जाता था तथा—

श्रेष्ठं वः पेशो अधिधायी दर्शतं स्तोमो वाजा ऋभवस्तं जुजुष्टन । धीरा सो हिष्टाः कवयो विपश्चित स्तान व एना ब्राह्मणा वेदयामसि ।। ऋ० ४ । ३६ ।७

अर्थ—(वाजा ऋभवः) हे ज्ञानी ऋभुवो अर्थात् धीमान् शिल्पियों ! (वः पेशः) आपका शिल्प (श्रेष्ठं) बहुत अच्छा तथा (दर्शतं) देखने योग्य (अधिधायि) रक्खा गया है । आप लोग (धीरासः) धीमान् (हि) प्रसिद्ध (स्थः) हैं तथा (कवयः) रसात्मक शिल्प के करने वाले धीर (विपश्चितः) ज्ञानरूप शिल्प के करने वाले आप लोग हैं (तान वः) उन आपको (एना ब्रह्मणा) इस मन्त्र द्वारा (वेदयामसि) हम लोग निमन्त्रण देते हैं ।

इस मन्त्र में ऋभु तथा धीर दोनों शब्द आये हैं । यहां भी श्री सायणाचार्य जी धीर शब्द के अर्थ धीमान् ही करते हैं । उनके संस्कृत भाष्य के शब्द यह हैं—

"यूयं धीरासो हि धीमन्तः प्रसिद्धाः"

अर्थात् हे ऋभुवो रथकारो अर्थात् शिल्पियो !

आप लोग धीमान् नाम से ही प्रसिद्ध हो । धीमान् शब्द ब्राह्मण वाचक है इसही कारण से महाभारत के वनपर्व में भी धीमान् शब्द का प्रयोग ब्राह्मण के लिये सामान्य रूप से ही हुआ है ।

यथा:—

ज्या घोषश्चैव पार्थानां ब्राह्म घोषश्च धीमताम ।
संसृष्टं ब्राह्मणा क्षत्रं भूय एव व्यरोचत ॥२०॥

अर्थात जब पाण्डव लोग द्वैत वन में गये जो कि (शिल्पज) वेदपाठी अनेक ब्राह्मणों का निवासस्थान था, तो वहां पाण्डवों के (वाण छूटते समय) धनुष की डोरी की आवाज उन वेदपाठी धीमानों की वेदध्वनि से मिल गई । इस प्रकार ब्रह्म (ब्राह्मण) से मिला हुआ क्षत्र (क्षत्रिय) बड़ा ही शोभायमान होता था ।

यहां धीमान् शब्द ब्राह्मण के लिये स्वतन्त्र रूप से ही आया है किसी विशेषण से नहीं । और जो कहीं किसी क्षत्रियादि के लिये भी धीमान् शब्द का प्रयोग हुआ है तो वह विशेषण रूप से ही हुआ जानना । जैसे कि किसी साहसी वीर पुरुष को सिंह या अधिक डील डौल वाले मनुष्य को हाथी तथा अधिक खाने वाले मनुष्य को दानव कह दिया जाता है । वास्तव में वह सिंह व हाथी और दानव नहीं है । उनके लिये वह

शब्द विशेषण रूप से ही कहे जाते हैं । सामान्य रूप से नहीं, सामान्य रूप से तो धीमान् केवल ब्राह्मण ही को कहते हैं अन्य वर्णस्थ मनुष्यों को नहीं क्योंकि धीमान् शब्द ब्राह्मण ही का वाचक है । अतः धीमान् शब्द का प्रयोग स्वतन्त्ररूप से ब्राह्मण के लिये ही होता है जैसा कि 'विश्वकर्म वंशभास्कर' के अध्याय ८ पृष्ठ १५७–१६१ तक लिखा हुआ है ॥ २० ॥

तथा श्री पं० ज्वाला प्रसाद जी मिश्र स्वरचित 'जाति भास्कर' नाम के पृ० १६६ पर लिखते है कि:–

[धीमान] इस नाम की विश्वकर्मा एक जाति है, इनमें समाज तथा आचार विचार भी पाया जाता है ।

तथा ज्योतिष पं० छोटेलाल शर्मा स्वरचित 'ब्राह्मण निर्णय' नाम के पृष्ठ ११२ पर 'अमरकोष' का निम्नलिखित एक श्लोक देकर उसके नीचे लिखते हैं कि:–

श्लोक-धीमान्सूरिः कृती कृष्टिर्लब्धवर्णो विचक्षणः ।
दूरदर्शी दीर्घदर्शी श्रोत्रिच्छान्दसौ समौ ॥

अमरकोष ब्रह्मवर्ग ७ का० २ श्लोक ६

कोषकार ने इस धीमान् शब्द को ब्रह्म वर्ग में माना है । अतः यह धीमान् जाति ब्राह्मण वर्ण में है ।

इत्यादि वाक्य प्रमाणों से भी धीमान् जाति श्रेष्ठ ब्राह्मण है जो कि उपरोक्त शिल्पी, रथकार, विप्र ब्राह्मण और पञ्चाल आदि नामों से सम्बोधित की गई है। इत्यादि संक्षेप से जानना।

अथ द्वितीयोऽध्यायः

१– सृष्टि कर्त्ता विश्व कर्मा परमेश्वरः–

विश्वकर्मा विमना आद्विहाया धाता विधाता। परमोत संदृक्। तेषामिष्टानि समिषा मदन्ति यत्र सप्त ऋषीन् पर एक माहुः ॥१॥ यजु० अ० १७ मन्त्र २६
तथा ऋग्वेद। मण्डल। १०। सू० ८२। मन्त्र २

भावार्थः– मनुष्यों को चाहिये कि जो सब जगत् का बनाने धारण पालन और नाश करने हारा अर्थात् जिसका कोई दूसरा सहायक नहीं हो सकता उसी (विश्व कर्मा) परमेश्वर की उपासना अपने चाहे हुए काम को सिद्ध करने के लिये करनी चाहिए। यजु० भाषा भाष्य अ० १७ मंत्र २६ ऋषि दयानन्द कृत इसका शब्दार्थ देखो– (वि० व० भा० अ० १) इस मन्त्र में जगत् के बनाने धारण, पालन और प्रलय करने हारे परमेश्वर का नाम विश्व कर्मा है।

तथाः–

स ब्रह्मा स विष्णुः स रुद्रस्स शिवस्सो ऽक्षरस्सो परमः स्वराट् ॥१॥ कैवल्योपनिषद्

अर्थात्– जो सृष्टिकर्त्ता विश्वकर्मा परमेश्वर है– वही ब्रह्मा, वही विष्णु, वही शिव, वही अक्षर और वही परम स्वराट् है ॥२॥

इसी प्रकार उस सृष्टिकर्त्ता विश्वकर्मा परब्रह्म के असंख्य नाम हैं जिनका वर्णन ही नहीं हो सकता, हम वेद वाक्य द्वारा केवल इतना ही कह सकते हैं कि:–

विश्व कर्मणे स्वाहा ॥३॥ (यजु०। अ० १२। मन्त्र ४३। म० भा०)

जगदुत्पत्ति स्थित्यादि कर्म कर्त्रे तुभ्यं स्वाहा सहुतमस्तु ॥

अर्थ– जगत् की उत्पत्ति और पालन आदि कर्म करने वाले तुम विश्वकर्मा के लिये सत्य वचन हो। महीधर भाष्य ॥३॥

विश्व कर्मा विमुञ्चतु ॥४॥ (यजु०। अ० १२ मन्त्र ६०)

महीधर भाष्य:–

विश्व कर्मा = विश्वं सृष्टि रूप कर्म यस्य स विश्व कर्मा ॥४॥

अर्थ– सृष्टि की रचना करना कर्म है जिसका वही विश्वकर्मा है ॥४॥

तथा:–

येन ऋषा विश्वकर्मा जजान ॥५॥ यजु० अ० १३ मन्त्र ४५)

द्वितीयोऽध्याय ।

महीधर भाष्यः- विश्व कर्मा स एव प्रजापतिः येन वाग् रूपे प्रजा जनान उत्पादि स्वात् ॥५॥

अर्थ- वही विश्व कर्मा प्रजापति है जिसने वाणी रूप से प्रजा को उत्पन्न किया है।

तथा- विश्वमेव कर्मणो जायते स विश्व कर्मा
स पर ब्रह्मा स जगत्कर्ता बभूवेति ॥६॥

श्रुति विश्व ब्रह्म पुराण अ० ५ से उ०

अर्थात् - जो जगत की उत्पत्ति, धारण, पालन और विनाश करने वाला है वही विश्व कर्मा, वही ब्रह्मा और वही जगत्कर्ता एक परमेश्वर है। विष्णु पुराण के अ० १,२ श्लोक ६६ में लिखा है कि-

सृष्टि स्थित्यन्तकर ब्रह्मा विष्णु शिवादिनाम् ।
स संज्ञां याति भगवानेक एव जनार्दनः ॥७॥

अर्थ- वह एक ही जनार्दन भगवान् (विश्वकर्मा) जगत् के निर्माण, पालन और संहार करने के हेतु ब्रह्मा, विष्णु और शिव इन तीन संज्ञाओं को धारण करते हैं ॥७॥

तथा-

प्रज्ञा वेद विद्याः सांख्यादयोऽपि कर्म ज्ञान बोधकाः
निगमागमाश्च । सर्वं विश्व निर्मितं स विश्वकर्मा ब्रह्मेति॥८॥
(तैत्तिरीय श्रुति पञ्च ब्रह्मोपनिषद् विश्व ब्रह्म कुलोत्साह स उ०)

अर्थ- प्रज्ञा, वेद, विद्या, सांख्यादि, कर्म, ज्ञान, बोध, निगम, आगम, और सारे संसार को रचना करने वाला यह विश्व कर्मा ब्रह्मा है॥

तथा-

अद्भ्यः सम्भृतं पृथिव्यै रसाच्च विश्व कर्मणः समवर्त्तताग्रे ।
तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे ॥
यजु० अ० ३१ मन्त्र १७

अर्थ- इस मन्त्र में आये हुए "विश्व कर्मणः" शब्द का भाष्य करते हुए ऋषि दयानन्द जी स्वरचित ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के सृष्टि विद्या विषय में इस प्रकार लिखते हैं कि:-

विश्वं सर्वं कर्म क्रियमाणमस्य स विश्वकर्मा

अर्थात् उस परमेश्वर पुरुष ने पृथिवी की उत्पत्ति के लिये जल से सारांश रस को ग्रहण करके पृथिवी और अग्नि के परमाणुओं के साथ जल के परमाणुओं को मिला के, जल को, वायु के परमाणुओं के साथ अग्नि के परमाणुओं को मिला के, अग्नि को और वायु के परमाणुओं से वायु को रचा है। वैसे ही अपने सामर्थ्य से आकाश को भी रचा है जो कि सब तत्वों के ठहरने का स्थान है। ईश्वर ने प्रकृति से लेके घास पर्यन्त सब जगत् को रचा है। इस प्रकार सब पदार्थों की रचना करने से उस ईश्वर

का नाम विश्वकर्मा है । जब जगत् उत्पन्न नहीं हुआ था, तब वह ईश्वर विश्वकर्मा के सामर्थ्य में कारण रूप से वर्तमान था और जब-२ वह त्वष्टा विश्वकर्मा परमेश्वर अपने सामर्थ्य से इस कार्य रूप जगत् को रचता है तब-२ कार्य जगत् रूप गुण वाला होकर स्थूल रूप होकर देखने में आता है ।

जब परमेश्वर ने मनुष्य शरीर आदि को रचा है तब मनुष्य भी दिव्य कर्म करके देव कहलाते हैं और जब ईश्वर की उपासना, विद्या, विज्ञान (शिल्प) आदि अत्युत्तम गुणों को प्राप्त होते हैं । तब भी उन मनुष्यों का नाम देव में होता है ।

विश्व ब्रह्म पुराण में लिखा है कि—

विश्वकर्मा महातेजो विश्वोत्पादन कौतुकः ।
दधौ स पुरुषाकारं त्रिजगद् गुरुरव्ययः ॥
सहस्रादित्य सङ्काशो दिव्याभरण भूषितः ।
दिव्याम्बर धरो देवो योग माया समावृतः ॥
भूत्वाथ पुरुषा कारो विश्व कर्मादि पुरुषः ।
प्रतीकेभ्यः सृजद्देवान् सृष्ट्योत्पत्ति चिकीर्षया ॥
मुखेभ्यो ब्राह्मणः पञ्च जाता मन्वादयः क्रमात् ।
मनुर्मयश्च त्वष्टा च शिल्पी विश्वज्ञ एव च ।

बाहुभ्यः क्षत्रियाः जाताः ऊरुभ्यां वैश्य जातः ।
पद्भ्यां शूद्रस्तु सञ्जातः ब्रह्माराड्विश्व कर्मणः ॥

अर्थ- वह प्रभु विश्व कर्मा महातेजस्वी है जो कि खेल के समान विश्व को उत्पन्न करने हारा त्रिजगत् का गुरु तथा अविनाशी है, उस प्रभु ने जगत् रूप पुरुष का आकार धारण किया और वह हजारों सूर्य सरीखा प्रकाशमान, दिव्य अलंकारों से सुशोभित और दिव्य जगत् रूप वस्त्र धारण करने हारा, योगमाया, संयुक्त हुआ । इस प्रकार उस आदि पुरुष विश्व कर्मा ने जगत् रूप पुरुषाकार होकर सृष्टि उत्पत्ति करने की इच्छा से अपने जगत् रूप शरीर के अवयवों के समान देवों को उत्पन्न किया । उस विश्व कर्मा जगत् रूप शरीर के मुखों से अर्थात् मुखवत् मनु आदि पाँच ब्राह्मण उत्पन्न हुए, जिनके नाम क्रमशः मनु-मय त्वष्टा-शिल्पी और विश्वज्ञ देवज्ञ इत्यादि हैं । बाहुओं के समान क्षत्रिय, ऊरु के समान वैश्य और पैरों के समान शूद्र उत्पन्न हुए ।

तथा—

विश्व कर्मा विराट् भूत्वा मन्वादि ब्राह्मणः सृजन् ॥
(विराट् [illegible] ब्र० कु० स० २ से उ०)

अर्थ- विश्व कर्मा ने विराट् रूप पञ्च मुखी होकर मन्वादि ब्राह्मणों को उत्पन्न किया ।

विश्व कर्मणा वृध्यानि । तेनैवात्र प्रतिष्ठि [illegible] भि ।
पंचमुखेभ्य: पञ्च शीर्षो मनु: प्रथम: । मयो द्वितीय: ।
त्वष्टा तृतीय: । शिल्पि चतुर्थ: । विश्वज्ञ पञ्चम: इति
स एवार्को विधीयते । सानग: सनातनोऽहभून: प्रत्न:
सुपर्णश्चेत्येते च सर्वे गोत्र पुरुषा: ।।

तैत्तिरीय श्रु० पञ्च ब्रह्मा० वि० ब० मु० [illegible] पृ० ३०

अर्थ– विश्व कर्मा ने वृद्धि करने के हेतु [illegible] सद्योजातादि पंच मुखो से अनुक्रमे– पञ्चमुखी मनु पहला, चतुर्मुख मय दूसरा त्रिमुख त्वष्टा तीसरा, द्विमुख शिल्पी चौथा, एक मुख देवज्ञ पांचवा ऐसे पांच शिल्पज्ञ पञ्चतत्व रूप अधिष्ठाता उत्पन्न हुए जिनमें से मनु का सानग मय का सनातन, त्वष्टा का अहभून, शिल्पी का प्रत्न तथा विश्वज्ञ (देवज्ञ) का सुपर्ण गोत्र अर्थात् नाम हुआ ।

तथा–

ब्राह्मणानां च जन्मैव शिवकल्याणमेव जायते ।
पञ्चवक्त्र समुत्पन्ना: पञ्चभि: कर्मभि: द्विजा: ।।
मनुर्मयस्तथा त्वष्टा शिल्पिकश्च तथैव च
देवज्ञ: पञ्चमश्चैव ब्राह्मणा: पञ्च कीर्तिता: ।।

ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड, प्रकरण ५१ श्लोक १, २
विश्व कर्मा के सद्योजातादि पांच मुखों के नाम । देखो– विश्व कर्मा वंश भास्कर, प० ४

अर्थ– शिल्पी ब्राह्मणों का जन्म (शिव) कल्याणकारी विश्व कर्मा के सद्यो जाति पांच मुखों से उत्पन्न हुए यह लोग पांच कर्मों से युक्त हुए, जिनके नाम मनु मय त्वष्टा, शिल्पी और देवज्ञ विश्वज्ञ इत्यादि हुए, ये पांचों ब्राह्मण कहलाते हैं । आगे इन पांचों के कर्म भी इस प्रकार कहे हैं:–

अयसो च मनु: कर्ता काष्ठकारो मयस्मृत: ।
त्वष्टक: कांस्य कर्ता च शिला कर्ता च शिल्पिक: ।
देवज्ञ: स्वर्णकारश्च पञ्चानाम् पञ्चकर्मकम् ।।
यो वेद पञ्च कर्माणि सर्व पापै: स: मुच्यते ।।

ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड पृ० ५१

अर्थ– मनु लोहे का काम बनाने वाला मय लकड़ी का, त्वष्टा कांसे तांबे का शिल्पी पत्थर का और देवज्ञ (विश्वज्ञ) सुवर्णादि का काम बनाने वाला हुआ । इन पांचों ब्राह्मणों के ये ही पांच काम हुए जो इन पांचों कर्मों को अच्छी तरह बनाना जानता है, वह सब पापों से छूट जाता है ।

स्कन्द पुराण के नगर ख० अ० १२ में लिखा है कि–
[illegible] त्वष्टा च शिल्पी च देवज्ञस्तथा ।
[illegible] विश्वकर्म मुखोद्भवा: ।।

अर्थ– इस प्रकार मुख्य पांच तरह के शिल्प कर्म करने वाले यह मनुः मय, त्वष्टा, शिल्पी तथा दैवज्ञ (विश्वज्ञ) पांचों देव ऋषि भगवान् विश्व कर्मा के मुख से उत्पन्न हुए हैं।

इस प्रकार इन मन्वादि पांचों देवों को आदि में अमैथुनी सृष्टि द्वारा उस महाप्रभु विश्व कर्मा (ब्रह्मा) ने उत्पन्न किया और वेदों का ज्ञान दिया।

शास्त्रों में यह मन्वादि क्रमशः अग्नि, वायु आदित्य, भृगु तथा अंगिरा आदि के नामों से सम्बोधित किये गये है (शेष देखो आगे अध्याय ७)

विष्णु पुराण के अध्याय १ व ७ में लिखा है कि–

भृगुं पुलस्त्यं पुलहं क्रतुमङ्गिरसं तथा।
मरीचिं दक्षमत्रिं च वसिष्ठञ्चैव मानसान्॥
नव ब्राह्मण इत्येते पुराणे निश्चयं गताः॥

अर्थ– उस सृष्टि कर्ता ब्रह्मा (विश्व कर्मा) ने प्रजा की वृद्धि के अर्थ भृगु-पुलस्त्य, पुलह-क्रतु, अंगिरा, मरीचि, दक्ष अत्रि और वसिष्ठ इन नौ मानस पुत्र पैदा किये। सारांश यह है कि ये सब अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न हुए हैं। पुराणों में ये नौ ब्रह्मा माने गये है।

वेद ने बतलाया है कि:-

यत्र ऋषयः प्रथमजा ऋचः साम यजुर्मही एकर्षिर्यस्मिन्नार्पितः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः॥

अथर्ववेद १०।७।१४

अर्थात् जिस सर्वाधार परमात्मा में वेदों के प्राप्तकर्ता प्रथम उत्पन्न ऋषि तथा ऋग्, यजु, साम तथा अथर्वादि वेद स्थित है, उस सर्वाधिकार स्कम्भ का वर्णन कौन कर सकता है।

"प्रथमजा ऋषयः" नामी शब्द विशेष ध्यान देने योग्य हैं क्योंकि ये स्पष्टतया बताते हैं कि सृष्टिक्रम में जब मनुष्य पैदा हुए तो ऋषियों का प्रथम उत्पन्न किया गया और उन्हीं को वेदों का ज्ञान दिया गया। किसने यह ज्ञान दिया, एक स्कम्भ अर्थात् विश्व कर्मा ब्राह्मण ने, जिसमें सब वेद स्थित हैं और जो एक ऋषि है।

इस प्रकार वेदों के प्राप्तकर्ता ऋषि लोग प्रथम उत्पन्न हुए हैं जिनके विषय आगे अ० ७ देखना।

भगवान् विश्वकर्मा का जन्मावतार

पुराणों में भगवान विश्वकर्मा के जन्म से जन्मावतार हुए हैं जो कि ब्राह्मणों में ही हुए हैं। अतएव भगवान्

विश्वकर्मा ने जब-२ लोकों के कल्याणार्थ जन्मावतार धारण किया है तब-२ ब्रह्मवंश में ही उत्पन्न हुआ है।

यथा-

आचार्यो विश्वकर्मा च आदिब्रह्म कुलोद्भवः।

पान्चाल ब्राह्मण निर्णय, व्या० ३[illegible]

अर्थ- आचार्यो अर्थात् जगद्गुरु विश्वकर्मा भी आदि ब्राह्मकुलों में उत्पन्न हुए हैं।

य इमा विश्वा विश्वकर्मा भौवनो विश्वकर्माण स्थिति इमानुकं भुवन आप्त्य इति च ॥

आश्वलायन सर्वानु० षड्गुरुभाष्य अ० [illegible]

अर्थ- य इमा विश्वा' इत्यादि मन्त्र मध्ये भुवन का पुत्र विश्वकर्मा हुआ। और भुवन का पिता 'आप्त्य' ऋषि था। अतः विश्वकर्मा ब्रह्म ऋषि हुआ। 'एवं च भुवनपुत्रत्वेन विश्व कर्मणः प्रतिपदनात्। आंगिरसवंशजत्वं ऋषिमौत्रत्वञ्चा विकलम् ॥

अर्थात भुवन के पुत्र विश्व कर्मा जी अङ्गिरा ऋषि के वंशज हुए।

दूसरा अवतार:-

भृगोस्त्व जनयदिव्या काव्यं वेद विदांवरम्।

देवासुराणमाचार्यं शुक्रं कवि सुतं गृहम् ॥

अर्थात्-भृगु ऋषि की दिव्या नामक भार्या से देव तथा

[illegible] के आचार्य श्री शुक्राचार्य जी उत्पन्न हुए। शुक्राचार्य के ब्रह्मतेज से युक्त चार पुत्र हुए। जिनके नाम त्वष्टा, वरुत्री, [illegible], और अर्मक थे इनमें से त्वष्टा ब्रह्मतेज से विशेष युक्त हुआ।

(वायु० पुराण अ० ४ श्लोक ७३-७७)

स्कन्द पुराण, काशी खण्ड के अ० ८६ के श्लोक ३,४ में बतलाया है:-

विश्व कर्माऽभवत्पूर्वं ब्राह्मणस्त्वपरा तनुः
त्वष्टुः प्रजापतेः पुत्रो निपुणः सर्व कर्मसु ॥
[illegible] सोऽथ बाल्ये गुरुकुले वसन्।
चकार गुरुशुश्रूषां भिक्षान्न कृत भोजनम् ॥

अर्थ- एक प्रत्यक्ष आदि ब्रह्मा ने ऐसा जो विश्व कर्मा था [illegible] प्रजापति त्वष्टा के पुत्र रूप में जन्म धारण किया तथा सर्व कर्मों में निपुण हुआ। त्वष्टा ने बालक विश्व कर्मा का [illegible] संस्कार कराकर विद्याभ्यास कराने के लिये गुरुकुल में [illegible] के पास रखा। विश्व कर्मा ने भिक्षावृत्ति से गुरु की सेवा की। यह विश्व कर्मा का दूसरा जन्मावतार हुआ।

[illegible] अवतार-

[illegible] भगिनी वरस्त्री ब्रह्मचारिणी।
[illegible] विचरत्युत ॥

प्रभासस्य तु भार्या सा वसुनामष्टमस्य च।
विश्वकर्मा महाभागस्तस्यां जज्ञे प्रजापतिः ॥

विष्णु पुराण अ० १ अ० १५ श्लोक १०८, ११६

अर्थ– बृहस्पति जी की बहन वरस्त्री ब्रह्मचारिणी तथा योग सिद्धा थी जो कि योगबल से समस्त भूमण्डल में भ्रमण करती थी। वह वसुओं में आठवें वसु प्रभास की भार्या हुई। उससे महाभाग प्रजापति विश्व कर्मा जी का जन्म हुआ। इत्यादि प्रकार से आदि पुरुष भगवान विश्व कर्मा के जन्मावतार हुए, कहे जाते हैं और इनके वहां जो प्रथम मुख से उत्पन्न हुए, मन्वादि कहे गये हैं, पांच पुत्र होते रहे हैं, इत्यादि संक्षेप से जानना।

आदि त्वष्टा जिसे आदित्य भी कहा गया है। विश्वकर्मा के अर्थ में आता है। इन शास्त्रों में त्वष्टा को विश्व कर्मा तथा विश्व कर्मा को त्वष्टा भी कहा गया है।

यथा– देव शिल्पन्यपि त्वष्टा ॥ अमर नाना० ३·३५
महेश्वर कृत टीका–देवशिल्पिन्यपि विश्वकर्मणि

अर्थ– त्वष्टा देवशिल्पी है अर्थात् देवशिल्पी विश्वकर्मा है।

तथा:–
विश्वकर्मासुर शिल्पिनो: ॥ अमर ना० ३।४०६

अर्थ–विश्वकर्मा सूर्य (आदित्य) तथा देव शिल्पी का वाचक है। इत्यादि प्रकार से त्वष्टा का आदित्य तथा विश्वकर्मा नाम है।

तथा:—

त्वष्टास्मै वज्रं स्वर्यं ततक्ष० ॥५॥ (ऋ० अ०१।२३६।२)

त्वष्टास्मै वज्रं स्वर्यं ततक्ष० (तैतिरीया२।५।अ०४।१३।४)

भाष्य-त्वष्टा (विश्वकर्मा) अस्मै (इन्द्राय) स्वयं (स्वर्गा-र्जित) वज्रं ततक्ष (तीक्ष्णी कृतवान्) ॥५॥

अर्थ-त्वष्टा अर्थात् विश्वकर्मा ने इन्द्र के लिये स्वर्ग के हित तीक्ष्ण वज्र निर्माण किया ॥५॥

तथा:—

ततश्चाशेष शिल्प कल्प प्रणेतारं धातारमिवान्यं विश्वकर्माणमाहूय, सकल कन्यानामेकैकस्य: प्रोत्फुल्लपङ्कजा ००॥६॥

तत्र तथैवानुष्ठितमशेष शिल्प विशेषाचार्य स्त्वष्टा दर्शित वान् ॥७॥ (विष्णु पु० अ०४ अ०२-५७।६८)

अर्थ-(जब सौभरि ऋषि मान्धाता की ५० कन्याओं के साथ विवाह करके उन्हें अपने आश्रम पर लेगये) तब उन्होंने दूसरे विधाता के समान अशेष शिल्प–कल्प प्रणेता विश्वकर्मा जी को बुलाकर उनसे प्रार्थना पूर्वक यह निवेदन किया कि इन समस्त कन्याओं में से प्रत्येक

के लिए पृथक २ महल बनाने की कृपा कीजिये। और
वे महल ऐसे हों कि जिनमें खिले हुए कमल और
कुंजते हुए सुन्दर हंस तथा कारण्डव आदि जल पक्षियों
से सुशोभित जलाशय हों, सुन्दर उपधान (मसनद) शय्या
परिच्छद (ओढ़ने के वस्त्र) हों तथा पर्याप्त खुला हुआ
स्थान हो।

तब सम्पूर्ण शिल्प विद्या के विशेष आचार्य त्वष्टा
जी ने भी उस सौभिर ऋषि के कथनानुकूल सब कुछ
तैयार करके उन्हें दिखा दिया॥

यहां प्रथम श्लोक में त्वष्टा (विश्वकर्मा) को दूसरे
विधाता के समान अशेष शिल्प कल्प प्रणेता कह कर
याद किया है और दूसरे श्लोक में सम्पूर्ण शिल्प विद्या
के विशेष आचार्य विश्वकर्मा को त्वष्टा के नाम से ही
उच्चारण किया है।

इत्यादि प्रकार से पाठक समझ गये होंगे कि त्वष्टा
ही आदि शिल्पाचार्य विश्वकर्मा हुए हैं।

वेदवाक्य:—

स तमकृणुता चतुर्वयम्॥ ऋ० मं० १ सू० ११० मन्त्र

यदा वाख्यच्चमसाश्चतुरः कृतान् आदि त्वष्टा०॥

ऋ० मं० १ सू० १६१ मं० ४

अर्थात् (स तमकृ०) इस मंत्रभाग के भाष्य में

सायणाचार्य ने यह बतलाया है कि सृष्टि के आदि में
त्वष्टा [विश्वकर्मा] के बनाये हुए चमस पात्र को ऋभुओं
ने होतृचमसादि चार विभागों में विभक्त कर दिया।

[यदावाख्य०] इस मंत्र में यह बतलाया है कि
तब आदि त्वष्टा अर्थात् विश्वकर्मा आया और उसने
चमस को चार विभागों में विभक्त देखा।

यहां त्वष्टा को स्पष्टरूप से आदि त्वष्टा [विश्व
कर्मा] ही लिखा है। अतएव यह त्वष्टा अर्थात् विश्व-
कर्मा आदि में अमैथुनी सृष्टि द्वारा अन्य सब मनुष्यों
से प्रथम उत्पन्न हुए हैं।

यथा:—

शृणोतु नस्त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः पिता वचः॥

ऋ० मं० १० सू० १४ मंत्र १०

त्वष्टुः प्रजानां प्रथमं जनित्रमग्ने मा हिंसीः परमे
व्योमन्॥ काण्वसंहिता अ० १५ अनु० ४

सायणभाष्यम्—त्वष्टुः प्रजापतेः सकाशादुत्पद्य-
मानानां मध्ये प्रथमं जनित्रं प्रधानत्वेनोत्पन्नमिति॥

वि० ब्र० कु० सं० १ स उ०

अर्थ—त्वष्टा अर्थात् विश्वकर्मा देव प्रजापति है,
उससे सब मनुष्यों से प्रथम उत्पन्न हुआ है।

अतएव यही त्वष्टा आदि विश्वकर्मा हुए हैं।

इस विषय में पुराणोक्त वाक्य भी यह है कि:—

त्वष्टा स एव विश्वकर्मा ॥ विश्व० महापु० अ० ५

अर्थात् त्वष्ट ही विश्वकर्मा है, इत्यादि संक्षेप [illegible] जानना ।

त्वष्टा (ब्रह्मा) है

अब हम पाठकों को यह भी विदित कराते हैं कि ये ही आदि त्वष्टा [विश्वकर्मा जी] ब्रह्मा के नाम से संबोधे गये हैं ।

त्वष्टा ब्रह्मा च० ॥१६॥ वि० अ० ५ । १५

अर्थात् त्वष्टा [विश्वकर्मा] ही ब्रह्मा है ॥१६॥

त्वष्टा [विश्वकर्मा] का स्वरूप:—

त्वष्टा चतुर्मुखोपेतो रक्तकान्तितनुप्रभः ।
बालार्ककोटिलावण्यो राजते हंसवाहनः ॥
रक्ताम्बरधरो देवो दिव्यचन्दनचर्चित ।
चतुर्मुखैश्चतुर्वेदान् परमेष्ठी वदत्यसौ ॥

मूलस्त० पु० वि० ब्र० पु० अ० १४,१५

अर्थात् त्वष्टा [विश्वकर्मा] चतुर्मुखी, लाल ता[illegible] वर्ण वाला है। कोटि बालसूर्यों के समान विभ्या[illegible] सद्गुणों का प्रकाश करने वाला जिसका वाहन हं[illegible] है और दिव्य चन्दन चढ़ाने वाला है और वह त्व[illegible]

(विश्वकर्मा) चतुर्मुख अर्थात् चारों वेदों का वक्ता (परमेष्ठी) ब्रह्मा है ।

वेदप्रमाण:—

विश्वकर्मा ह्यजनिष्ट देव० ॥   यजु० १७ । ३२

महीधर भाष्य–विश्वकर्मा देव तिर्यगादि जगदभेद [illegible] सत्यलोकवासी चतुर्मुखो देवः ॥

अर्थात् विश्वकर्मा (त्वष्टा) के अर्थ सत्यलोकवासी चतुर्मुख ब्रह्मा के हैं ॥

इस प्रकार आदि विश्वकर्मा अर्थात् त्वष्टा को ब्रह्मा भी कहते हैं, किन्तु फिर आगे चलकर और भी बहुत से ब्रह्मा हुए हैं ।

(इस विषय में जो अधिक देखना चाहें तो वह "विश्वकर्मा वंशभास्कर" के अ० ६ पृ० १०६ में देखें)

[illegible]–पुलस्त्या आदित्या रुद्रा वसवः समन्धिता पुर[illegible] ब्राह्मणो० यजुर्वेद भाषाभाष्य । अ० १२। मन्त्र ४४

अर्थात्–इस मन्त्र में आये हुए 'ब्राह्मण:' पद का [illegible] ऋषि दयानन्द जी ने इस प्रकार किये हैं कि:— (ब्राह्मण:) चार वेदों को पढ़के ब्रह्माकी पदवी को प्राप्त [illegible] (अत: वेदों को पढ़कर ही ब्रह्मा बनता है)

[illegible] ने आदि में स्त्री और पुरुषों को पैदा किया [illegible] इस त्वष्टा (ब्रह्मा) जी की स्त्री का नाम

गायत्री [सरस्वती] कहा गया है। जोकि अमैथुनी सृष्टि में जैसेकि अन्य ऋषिगण उत्पन्न हुए थे वैसे ही वह भी उत्पन्न हुईथी। क्योंकि उस विश्वकर्मा परमेश्वर ने आदि में अमैथुनी सृष्टि द्वारा पुरुषत्व और स्त्रीत्व आदि के दोनों रूपों को बराबर उत्पन्न किया था।

यथा:—

> द्विधा कृत्वाऽऽत्मनो देहमर्द्धेन पुरुषोऽ भवत्।
> अर्द्धेन नारी तस्यां स विराज मसृजत्प्रभुः॥

मनु० ।१।३२। स्वामी तुलसीराम जी कृत भाषानु०

अर्थ-उस प्रभु [विश्वकर्मा परमेश्वर] ने अपने जगत् रूप शरीर के दो भाग किये जोकि अर्द्ध भाग से पुरुष अर्द्ध भाग से स्त्री हुई। उस स्त्री में विराट् सारे जगत् को एक पुरुष रूपक में उत्पन्न किया।

यहां सब जगत् को एक पुरुष माना है। जिसमें अर्द्ध भाग स्त्रीपने का और अर्द्ध भाग पुरुषपने का है। जोकि मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष और पृथिव्यादि लोक इत्यादि सब में स्त्री भाव और पुरुष भाव है।

इत्यादि प्रकार से विश्वकर्मा परमेश्वर ने आदि में स्त्रीपने और पुरुषपने के दोनों रूपों को बराबर उत्पन्न किया था जोकि मनुष्य, पशु और पक्षी आदि सब में वर्तमान है।

उस स्त्रीपन और पुरुषपन की मनुष्य-श्रेणी में जो [illegible] हुई हैं, पुराणों में उनके सम्भूति, अनुसूया, गायत्री [सरस्वती], ख्याति, प्रीति, धृति, क्षमा, प्रसुति [illegible] और शतरूपा आदि कई नाम कहे हैं। ३१

[illegible]गम अ० ७ तथा ब्राह्मणोत्पत्तिमार्तण्ड प्रकरण [illegible] में लिखा है कि:—

> विश्वकर्मानिदेशेन सुराः सृष्टा विरिञ्चिना।
> चत्वारो मनवो लोकाः निर्मिताः सृष्टिहेतवे॥

अर्थात् विश्वकर्मा परमेश्वर की [वेदाज्ञा] से ब्रह्मा [illegible] ने देवों की सृष्टि रची अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र यह चार वर्ण और लोक भी बनाये।

तथा:—

> लोकान्ब्रह्माण्डमध्यस्थान्स्रष्टृब्रह्मासृजत्स्वयम्।
> चतुर्मुखस्वरूपेण भुवनानि चतुर्दश॥

वि० ब्र० पु० १५, १२

अर्थात् उस स्रष्टा [ब्रह्मा] ने अपने चतुर्मुख रूप [चारों वेदों के ज्ञान] से ब्रह्माण्ड के मध्यस्थानी चौदह लोक स्थापन किये।

तत्पश्चात् जो गायत्री अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न हुई थी फिर उसके नाम ["वेदतत्त्वप्रकाश जातिनिर्णय" में पुराणोक्त] सरस्वती, गायत्री और ब्राह्मणी आदि

हुए । त्वष्टा [ब्रह्मा] अर्थात् विश्वकर्मा ने उस गायत्री [सरस्वती] की सुन्दरता पर मोहित हो उससे विवाह किया। बहुत दिन व्यतीत होने पर उस गायत्री में ब्रह्मा (त्वष्टा)जी के एक पुत्र मनु उत्पन्न हुए जो स्वायंभुव कहलाते हैं और विराट भी कहलाते हैं।

वासादेहार्ध सं[illegible]ता गायत्री ब्रह्म वादिनि ।
जननी या मनादेंवी शत रूपा जितेन्द्रिया ॥३४॥

(मत्स्यपु० अ०३।५०-वेद तत्व प्रकाश जाति निर्णय । पु० [illegible]

अर्थात्-विश्वकर्मा परब्रह्म के जगत् रूप शरीर के अर्धभाग स्त्रीत्व में उत्पन्न हुई वह वेदोंके पंडिता गायत्री (सरस्वती)मनु की जननी (माता) हुई।इस प्रकार मनु कीमाता गायत्री और पिता त्वष्टा(विश्वकर्मा)जी हुए।

स्कंद पुराण के नागर खंड। प्र० ५ विश्वकर्मो पाख्यान के श्लोक २३ में तथा विश्वब्रह्म कुलोत्सा[illegible] संग्रह १ पृ ६३।६४ पर इस प्रकार लिखा है कि।—

त्वष्टा रूपाणि स मनु जज्ञे त्वष्टृ स्वरूप धृक् ।
त्वष्टा सर्वज्ञ रूपो ऽयं त्वष्टृ रूपा सरस्वती ॥३५॥

अर्थ-उस गायत्री अर्थात् सरस्वती का पुत्र वह मनु, त्वष्टा (ब्रह्मा) केसामने रूप वाला उत्पन्न हुआ। और वह तनु की माता गायत्री अर्थात् सरस्वती भी त्वष्टा के समान ही रूपवती थी।

तात्पर्य यह है कि जैसे त्वष्टा शिल्पाधिपति (विश्वकर्मा) जिसे ब्रह्मा नाम से भी उच्चारण किया गया है। [illegible] रूपों का ज्ञाता विज्ञानवान् हुआ है वैसे ही उस की धर्मपत्नी सरस्वती* भी सर्व विज्ञानयुक्ता थी।

इत्यादि प्रकार से त्वष्टा अर्थात् विश्वकर्मा को ब्रह्मा के नाम से भी उच्चारण किया गया है क्योंकि चारों वेदों के विद्वान को ब्रह्मा कहा जाता है जैसा कि प्रथम भी कह आये हैं।

यद्यपि यहां त्वष्टा (विश्वकर्मा)को ब्रह्मा कहा गया है तथापि पुराणों में और भी ब्रह्मा माने गये है। जैसे कि एक ब्रह्मा तो वह हुए जोकि विष्णु भगवान् विश्वकर्मा की नाभि कमल से उत्पन्न हुए कहे गये हैं और विष्णु पुराण के अं०१ प०७ श्लो०५-६ मेंऔर भी भृगु आदि [illegible] ब्रह्मा माने गयेहैं।जैसा कि प्रथम भी कह आये है।

इसी प्रकार वेदार्थ के वक्ता शिल्पज्ञ ऋषियों को [illegible] भी कहा जाता है। इत्यादि संक्षेप से जानना [illegible]॥

---

*[illegible] (यजु० । अ० १८ । ५)
[illegible] "सरस्वती" पद आया है। जिसके अर्थ-[illegible] बहुत विज्ञान वाली स्त्री के किये हैं ०

अथ—तृतीयोध्याय:

आदि शिल्पाचार्य भगवान् विश्वकर्मा का शिल्प:—

दिवि भुव्यन्तरिक्षे वा पाताले वापि सर्वश: ।
गृह यन्त्ररथो भूषाप्रतिमा शासनादिकम् ।।
यत्किंचिद् दृश्यते चित्रंतत्सर्व विश्वकर्मजम् ।।

(पद्म पुराण । भूखण्ड श्लो । २० २१ ।

अर्थ:-महादेव जी कहते हैं कि हे पार्वती-पृथ्वी [illegible] आकाश में और पाताल में अर्थात् स्थानों में गृह यंत्र, रथ (विमान) मूर्तियों, अलंकार आदि २ जो भी कुछ चित्र दृष्टि में आते हैं वह सब विश्वकर्मा के ही रचे हुए हैं ।।

फिर इसी पुराण के दूसरे स्थान पर इस प्रकार लिखा है कि:—

दिवि भुव्यंतरिक्षे वा पातालेवापि सर्वश: ।
यत्किंचिच्छिल्पिनां शिल्पंतत्प्रवर्तक ते नम: ।।

पद्म पुराण । भू० विश्वकर्मा माहात्म्य । अ० २५ । १७

अर्थ—आकाश, पृथ्वी और पाताल आदि के सब स्थानों के यथावत् शिल्पियों के शिल्प का प्रवर्तक

[illegible] वाले जो विश्व कर्मा है उसके लिये हमारा नमस्कार हो ।। विश्व कर्मा के शिल्प शास्त्र की महत्ता–

स्थापत्यवेदो शिवकर्मादि शिल्प शास्त्रम्
अथर्व वेदस्योपवेद ।।

(चरणव्यूह खं० ४) अर्थात्– अथर्ववेद का उपवेद स्था[पत्य]वेद शिल्प शास्त्र को विश्व कर्मा ने रचा ।।

तथा.–

[illegible] मानुषं प्रोक्तम् सर्व प्राण्या परिगृहेत् ।
सर्व शास्त्रेणसारं तु कल्पयेत् विश्व कर्मण: ।।

(विश्व कर्मीयम् । अ० १२)

अर्थ– देवताओं, मनुष्यों अथवा सब प्राणियों हितार्थ विश्व कर्मा ने शिल्प शास्त्र की रचना की ।

[illegible] नामक ग्रन्थ में लिखा है कि–

[illegible] शास्त्रंतु आर्थवणस्य कथ्यते ।
[illegible] विचिन्त् शिल्प शास्त्रं तथैव च
[illegible] कुलादौ विश्व कर्मण: ।
[illegible] कली चैव प्रवर्तते ।।

अर्थ– [illegible] का उपवेद शिल्पवेद जिसे अर्थशास्त्र अथवा [illegible] में विश्वकर्मा ने शिल्प शास्त्र के [illegible] (४०२।४६)

सतयुग में विश्व कर्मा ने शिल्प की पृथक-२ बारह हजार संहिताए रचीं । जिनका कलियुग में आकर हजार शास्त्रों में समावेश हो गया ।

इसी समय की अधोगति को पाठक स्वयं ही समझ सकते हैं कि आज उन शास्त्रों के नाम तक भी स्मरण नही रहे और यदि उनमें कुछ ग्रन्थ मिलते भी हैं तो कुछ हस्त लिखित, और छपे भी हैं तो बिखरे हुए मौतियों की भांति कोई कही और कोई कही पर है । इस समय हमें शिल्प सम्बन्धी लगभग एक सौ ग्रन्थों के नाम मिले हैं जो कि "विश्वकर्म वंश भास्कर" के दूसरे भाग में स्वधृत किये गये हैं जो छपने वाला है ।

पाठक वृन्द समझ गये होंगे कि आदि में भगवान् विश्व कर्मा ने शिल्पशास्त्र की रचना की । और वे ही आदि में अंगिरा ऋषि के पुत्र सुन्धवा के ऋभु नामक पुत्रों के गुरु हुए हैं ।

ऋभुओं के गुरुत्वष्टा । (विश्वकर्मा)

यथा'—

ऋभुर्विभ्वा वाजइतिसुधन्वनः आंगिरसस्य त्रयः पुत्राबभूवु॰ (निरुक्त । दैवतकांड । उत्तरषट्कम् ११ अ० २ पा० १३ । खं॰ १०)

अर्थात्— अंगिरा ऋषि के पुत्र सुन्धवा के ऋभु

विभ्वा और बाज यह तीन पुत्र हुए हैं । इनके यह नाम पृथक २ हैं तथापि यह सब ऋभु ही कहलाते हैं ।

वेद वाक्य:—

विष्ट्वी शमीतरणि त्वेनवाघतो मर्त्तासः सन्तो अमृतत्वमानशुः । सौधन्वना ऋभवः सूरचक्षसः सम्वत्सरे समपृच्यन्त धीतिभिः ।

(ऋ० । म०१ सू०११० । मं०४)

अर्थः—(इस ऋचा का अर्थ यास्कमुनि जी निरुक्त में इस प्रकार करते हैं कि) (शमी) कर्मों को (तरणित्वेन) शीघ्रता से (विष्टी) करके [वाघतः] यज्ञ का अनुष्ठान करने वाले या मेधावी लोग [मर्त्तासः+सन्तः] मनुष्य होते हुए भी [अमृतत्वम्] देव भाव को [आनशुः] प्राप्त हुए [सौधन्वनाः सुधन्वा की सन्तान]ऋभवः] ऋभु लोग [सूरचक्षसः] सूर्य के समान विख्यात अर्थात् सूर्य के समान दर्शन वाले अथवा सूर्य के समान तीक्ष्ण बुद्धि वाले [सम्वत्सरे] सालभर [धीतिभिः] कर्मो से [समपृच्यन्त] युक्त रहते हैं । इस कारण वह देव होगये ।।निरुक्त दैवत कांड । उत्तर षट्क । पाद २ । खंड ४)

शमी । धी । शिल्पम् । इत्यादि षड्विंशति कर्म नामानि । निघण्टु २ । १ इस निघण्टु के प्रमाण से

शमी और शिल्प एकार्थ वाची है अतः अंगिरा के वंश में उत्पन्न हुए सुधन्वा [विश्वकर्मा] के पुत्र ऋभु लोग [शमी अर्थात् शिल्प] कर्मों को करने वाले मनुष्य होते हुए भी देव भाव को प्राप्त हुए हैं।

चिष्णोः पुत्रः सुधन्वास ऋभवाश्चसुधन्वनः।
रथकाराः स्मृतादेवाऋषयायेपरिश्रुताः ॥

(वायु पु०। खं०२। उत्तर भा० अ० ४)

अर्थात् सुधन्वा के पुत्र ऋभु लोग रथकार हुए जो कि देवता तथा ऋषि हुए सुने जाते हैं। एक समय यह सोम पान करने के लिये तय्यार ही हुएथे कि देवप्रेषित दूत अग्नि उनका समान रूप देखकर अपने आप भी वही रूप धारण कर सोम पान करने के लिये चौथा हो कर उनके बीच में आ बैठा।

ऋभु लोग अपने जैसे रूप वाले उस नवागतको देख कर अपने में और उसमें विवेक करने में असमर्थ होगये उस समय वे इस प्रकार संदेह करने लगे कि क्या यह आयु में हम से बड़ा है। अथवा हम से छोटा है। क्या देवों ने इसे दूत बना कर भेजा है। इत्यादि बातों का निर्धारण कैसेकिया जाये ? इस प्रकार उनके मन मेंशंका

[illegible] हुई। तदनन्तर यथा कथञ्चित् उसको अपनेसे भिन्न [illegible]चय करके प्रत्यक्ष रूप में उससे कहने लगे। ॥१॥

कि:—

किमु श्रेष्ठः किंयविष्ठो नआजगन् किमीयतेदूत्यंकः।
[illegible]द्रूचिम न निन्दिमचमसं येमहाकुलो ऽग्ने भ्रातर्द्रुण [illegible]मु तिमूदिम ॥११॥ (ऋग० ।१।१६१।१)

अर्थात्-हेभ्रातर अग्नि !तू सोम पान करने केलिये ही [illegible] है। इस प्रकार हम चमस का अपमान नहीं कर [illegible] क्योंकि चमस त्वष्टा निर्मित होने के कारण महा [illegible] है ॥११॥

अग्नि उन्हें उत्तर देता है कि:—

[illegible]चमसं चतुरस्कृणोतन तद्वोदेवा अब्रुवन्तद्व [illegible]मम। सौधन्वनायद्येवा करिष्यथसाकंदेवैर्यज्ञिया [illegible] भविष्यथ ॥१२॥

(ऋ० १०। मण्डल १। सू० १६१। मन्त्र २

[illegible] सुधन्वा(विश्वकर्मा)के पुत्रो त्वष्टा निर्मित [illegible] के चार विभाग करदो। ये चार विभाग करने के [illegible] केवल मैं ही नहीं कहरहा परन्तु इन्द्रादि देवों नेही [illegible] कर्म करने केलिये आज्ञा दी है। इस आज्ञा [illegible] आया हूं। और उन्होंने यह भी कहा

त कि यदि तुम ऐसा करोगे तो तभी तुम्हें देवत्व प्राप्त होगा ॥१२॥

ज्येष्ठआहचमसा द्वाकरेतिकनीयान् त्रीन्

कृणवामेत्याह। कनिष्ठचतुरस्करेति त्वष्टऋ भव स्तत्तत् यद्वचोवः ॥१३॥

(ऋग०।मंडल४ सू० ३३ मं० ५)

भाष्यं-एकंचमसंचतुरःकृणोतन(ऋग०।१सू०१६१।मं० २) इतियदा। देवदूतोग्नि ऋ भूनाहदेवत्वं प्राप्स्युथेनत तेषुमध्येदेवत्वं प्राप्स्युक्तएको ज्येष्ठ ऋ भुरितरावा किमितिउच्यते। चमसाद्वाकरेति। एकमेवसंतं कृणवामेति। कनीयान्तदनंतरो विभ्वार्थ।नकृणव कृणवामेत्याह। तदेवंचतुष्करणरूपं हे ऋ भवः त्वष्टा युष्मद्गुरुः पनयत् वस्तन्। अंगीचकारेत्यर्थ ॥१३॥

(विश्व ब्र० कु० सं० ३ से ४०)

अर्थ—जब देवों के भेजे हुए अग्नि दूतने ऋ भुवो से कहा कि यज्ञ चमस पात्र जोकि एक है। उस एक चमस पात्र के चार चमस पात्र करने से देवत्व प्राप्त होगा। तबउन ऋ भुवों मेंसे ज्येष्ठऋ भु नामकने उसएक चमस पात्र केऐसे होदो चमसपात्र बना दिये। दूसरे कनीयान् विभ्वा नामक ऋ भुने उनदो के वैसे हीतीन चमस पात्र

बना दिये। तीसरे कनिष्ठ बाज नामक ऋ भु ने उन तीन चमस पात्रों के वैसे ही चार चमस पात्र बना दिये।

एवं च हे ऋभुवों (रथकार) देवों इस पात्र चतुष्करण रूप शिल्प कर्म को तुम्हा गुरु त्वष्टा (विश्वकर्मा) अंगीकार करेगा।

इस प्रकार आदि में ऋभुवों के गुरु आदि त्वष्टा (विश्व कर्मा प्रजापति) ही हुए हैं और गुरु शिष्य के सम्बन्ध से वह विश्व कर्मा प्रजापति के पुत्र कहे गये हैं।

देखो (विश्व कर्मा वंश भा० अ० ११ पृ० २०६, २११)

(सप्तर्षियों के गुरु विश्व कर्मा)

श्री कृष्ण जी भीम के प्रति कहते हैं कि हे भीम पहले सप्त ऋषियों (कश्यप, अत्रि, भारद्वाज, विश्वा मित्र, गोतम, वशिष्ठ, और जमदग्नि आदि) ने ब्राह्मणत्व प्राप्त करने की इच्छा से आदि शिल्पाचार्य भगवान विश्व कर्मा की इस प्रकार प्रार्थना की:—

अस्माकं दीयतां शीघ्र भगवन् यज्ञ शीलताम् ॥१॥
यजन याजनं चैवाध्ययनाध्यापनम् तथा ॥
दान प्रतिग्रहश्चैति षट् कर्माणि महा विभोः ॥८॥
श्रुत्वा तु मयस्तेषां श्रुत्वा तद्रोम हर्षणः ॥९॥
तथास्तु—इति वचो दत्वाशपथं कर्तुंन्न चानृतम् ॥

इत्युक्त्वा स ददौ तेषां षट्कर्माणि महाविभुः ॥११॥
ऋषिभिस्तद्गृहीतानि षट् कर्माणि तदा मया तु ॥१॥
(भविष्य पु० उत्तरभाग । अ० ६८ । कृष्ण भीम संवादे)

कि हे विश्वकर्मन् अब तक हमने बहुत तपाचरण किये अतः अब आप कृपा कर हमें ब्राह्मणत्व के षट् कर्मों (अर्थात् वेद पढ़ना पढ़ाना, यज्ञ करना, कराना, दान देना और लेना आदि) के अधिकार प्रदान कीजिये । ऋषियों के यह वाक्य सुनकर विश्व कर्मा ने प्रसन्न हो उनको षट् कर्माधिकार दे दिया और उन कश्यपादि सातों ऋषियों ने उन शिल्पाचार्य विश्व कर्मा से षट् कर्माधिकार ग्रहण कर लिया ।

इस प्रकार सप्त ऋषियों के गुरु विश्व कर्मा ही हुए है यह हमने संक्षेप से ही कह दिया है किन्तु "विश्वकर्मा वंश भास्कर के द्वितीय भाग में यह विषय पूर्ण रूप से लिखा गया है ।

विश्व कर्मा के सप्त ऋषियों के गुरु नहीं बल्कि सप्त ऋषियों की सतति के भी गुरु विश्व कर्मा ही हुए हैं ।

यथा—

जे केवल विश्वकर्म च मूर्तिमंत ।
सप्तऋषि संतति शिष्य समस्त ॥६५॥

(विश्वकर्म पुराण । अ०३ ओवी ६३—विश्व कार्य कुलोत्साह । सं० २ से ३)

इस प्रकार सप्त ऋषियों की समस्त सन्तानें विश्व कर्मा के हुए है ।

सभी ही विश्व कर्मा का शास्त्रों में जगत् गुरु के नाम से उच्चारण किया गया है ।

तथाः—

नादात्मा विश्व मूर्ति च विश्व कर्मा जगद् गुरुः ।
गहु शास्त्रार्थ आचार्यो विश्व कर्मा तु उच्यते ॥
सकलाधिकार । विश्वकर्म प्रकरण— वि०अ०कु०स०३

तथाः—

विश्वकर्मा जगन्नाथो विश्व कर्मा जगद् गुरुः ॥
(मुलस्थम्भ पु०अ० १७)

इत्यादि प्रकार से विश्व कर्मा जगद्गुरु के नाम से ही उच्चारण किया गया है ।

वायु पुराण में लिखा है किः—

देवाचार्यस्य महतो धीमतः विश्व कर्मणः ।
विश्व कर्मात्मजश्चैव विश्व कर्ममयः स्मृतः ॥
(वायु पुराण । उत्तर भाग अ० २२ । १६)

अर्थात् धीमान् विश्व कर्मा जो बड़े २ देवताओं के गुरु हुए है तथा विश्व कर्मा के वंशज भी समस्त शुभ कर्मों में कुशल विश्व कर्मा के समान ही हुए हैं इत्यादि संक्षेप से जानना

॥ इति ॥ ३ ॥

विश्व कर्मा ब्राह्मणः-

विश्वकर्मा सर्वस्यकर्ता ॥१॥ निरुक्त । दैवत कां० । अ० १ । खं० २६

अर्थात्- सब प्रकार के उत्तमोत्तम शिल्पीय पदार्थों की रचना करने वाले ब्राह्मण को विश्व कर्मा कहते हैं । अतः विश्व कर्मा का अर्थ पूर्ण शिल्पी का वाची है ।

तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार अग्नि यज्ञ में ऋग यजु, साम द्वार कार्य सम्पादन करने वाले कार्य कर्ता लोग क्रमशः होता है, अध्वर्यु, उद्गाता कहलाते हैं और इन तीनों कार्य-कर्ताओं पर निरीक्षण करने वाला प्रधान कार्यकर्ता ब्रह्मा कहलाता है इसी प्रकार अथर्ववेद द्वार शिल्प यज्ञ करने वाले तीन प्रकार के कार्यकर्ता होते थे । जिनके ऋभु, विभ्वा और वाज यह तीन नाम कहलाते थे और इन तीनों पर निरीक्षण करने वाले प्रधान कार्यकर्ता का नाम त्वष्टा अर्थात- विश्व कर्मा होता था । यही कारण है कि शिल्पी ब्राह्मणों में विश्व कर्मा पद सबसे बड़ा है ।

यद्यपि विश्व कर्मा शब्द यथार्थ में उस ही ब्राह्मण विशेष का बोधक है जोकि पूर्ण शिल्पी अर्थात-शिल्पाचार्य है । परन्तु आदरार्थ सामान्य रूप से यह शब्द समस्त ब्राह्मणों के लिये भी प्रयुक्त हुआ है । जैसे कि वैश्यों में श्रेष्ठी (सेठ जी) सबसे बड़ा है । व्यापार श्रेणी के प्रधान पुरुष का श्रेष्ठी अर्थात सेठ जी नाम है ।

तथापि आदरार्थ हर एक वैश्य के लिये लोग इस शब्द का प्रयोग कर देते हैं । इसी प्रकार शिल्पी ब्राह्मणों को भी विश्वकर्मा कहते हैं । ॥१॥

तथाः—

यस्यां वेदिं परिगृह्णन्ति भुम्यां यस्यां यज्ञं तन्वते विश्वकर्माणः । सानाभूमिर्वर्धयत् वर्धमानाः ॥२॥

(अथर्व० ।कांड १२ सू०१। मंत्र १३)

अर्थ-विश्वकर्माणः) शिल्पी लोग यस्याम्) जिस (भूम्याम्)पृथिवी में(वेदिम) वेदी हवन कुण्ड को (परिगृह्णन्ति) सब ओर से सुन्दर युक्त निर्माण करते हैं । और (यस्याम्) जिस वेदी में (यज्ञम्) अग्नि होत्रादि होम को (तन्वते)करते हैं[सा+वर्धमानः] वह बढ़ी हुई [भूमिः+नो पृथिवी हम सबको [वर्धयत्] बढ़ावे ।

इस मन्त्र में विश्वकर्माणः का अर्थ ही शिल्पी ब्राह्मणों केलिये ही प्रयुक्त हुआहै ।जोकि वेदि[हवनकुण्ड बनानेवाले और उसमें होम[यज्ञ]करने वाले कहेगये हैं । इसप्रकार शिल्पी ब्राह्मणों को विश्वकर्मा भी कहतेहैं ।२।

तथाः—

नमो रोहिताय स्थपतये० ॥३॥ यजु०।अ०१६।मंत्र १६।

महीधराचार्य भाष्यः—स्थपतये स्थपतिः गृहादीनां स्था पनं करोति विश्वकर्म रूपेण० ॥३॥

महीधर भाष्य:—स्थपति गृहादिकर्त्ता विश्वकर्म रूपेण तस्मैनमः ॥

अर्थ—विश्वकर्मा के स्वरूप से मकानादि शिल्पीय पदार्थों की रचना करने हारे शिल्पियों को नमस्कार [हो] ॥३॥

इस प्रकार शिल्पीब्राह्मण नमस्कार के योग्य है। और यह विश्वकर्मा के स्वरूप से ही रचना करते हैं। इसलिये शिल्पी ब्राह्मणों को विश्वकर्मा कहते हैं और विश्वकर्म वंशीय भी कहते हैं।

विश्वकर्म वंशीयः—

प्रश्न:—धीमान् [शिल्पी] ब्राह्मण लोग अपने को विश्वकर्म वंशीय क्यों कहते हैं।

उत्तर:—शिल्पज्ञ अर्थात् विश्वकर्मा ऋषियों की संतान होने से धीमान् [शिल्पी] ब्राह्मण अपने को विश्वकर्म वंशीय कहते हैं।

उदाहरण:—जैसे क्षत्रियों में राजा का पद बड़ा है क्योंकि प्रजा पर शासन करने वाले राजधानी के स्वामी को राजा कहते है और राजाके पुत्र को राजपुत्र [वा राजपूत] कहते हैं। इस प्रकार के राजाओं के वंशों में उत्पन्न हुए क्षत्रिय लोग वंश परम्परा के कारण

अपने को आज पर्यन्त भी चाहे उनके पिता प्रपितामह आदि के पास घर की एक बिस्वा भूमि भी न हो तथापि वह अपने को राजपुत्र वा राजपूत ही कहते और कहलाते चले आते हैं।

इस ही प्रकार विश्व कर्मा शब्द पूर्ण शिल्पी का वाची है, अर्थात् पूर्ण शिल्पी विद्वान् ब्राह्मण को विश्व कर्मा कहते हैं। जैसे भृगु, अंगिरा, तथा विश्वकर्मा के शिष्य कश्यपादि सप्त—ऋषियों की सन्तान होने से धीमान ब्राह्मण अपने को परम्परा से विश्व कर्मा के वंशीय ही कहते चले आ रहे हैं। क्योंकि उपरोक्त भृगु, अंगिरा, तथा कश्यपादि सप्त ऋषि और अगस्त्य यह सब पूर्ण शिल्पी कलान्तर में विश्व कर्मा ही हुए हैं।

धीमान ब्राह्मणो के यहां दश मुख्य गोत्र प्रवर्तक ऋषि हैं। जैसा कि पाठकों को आगे लिखे अनुसार विदित होगा। अब शिल्पिज्ञ विश्व कर्माओं (ऋषियों) के नाम संक्षेप से लिखते हैं—

मनु मयस्तथा त्वष्टा शिल्पी विश्वज्ञ एव च।
विश्व कर्म सुताः ह्यते रथकारास्तु पंच च॥

तृतीय अध्याय

(स्कंद पुराण । नागर खंड अ० ५- गवर्नमेंट ओरि० लाइब्रेरी मद्रास) अर्थात्- मनु, मय, त्वष्टा शिल्पी और विश्वज्ञ (दैवज्ञ) यह विश्व कर्मा के पाँचों रथकार (शिल्पज्ञ) हुए हैं ।

> अयसां च मनुः कर्त्ता काष्ठकारो मयप्रभुः ।
> तथाष्ट्रिकः कांस्यकारी चशिलाकर्त्ता च शिल्पिकः ॥
> दैवज्ञः स्वर्ण कारश्च पंचानां पंच कमकम् ।
> यो वेद पंच कर्माणि सर्व पापैः स मुच्यते ॥

(ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तंड प्रकरण ५१)

अर्थात्- मनु लोहे का काम बनाने वाला, मय लकड़ी का त्वष्टा कांसा आदि तांबे का, शिल्पी पत्थर का और दैवज्ञ (विश्वयज्ञ) सोने का काम बनाने वाला हुआ जो इन पांचो शिल्पों को अच्छे प्रकार करना जानता है वह सब पापों से छूट जाता है।

अंगिरा से विज्ञान (शिल्प) की याचना

अग्ने अंगिरः शतं ते सन्त्वा वृतः सहस्रं ते उपावृतः । अधा पोषस्य पोषेण पुनर्नो नष्टमा कृधि पुनर्नो ।

(यजु० । अ० १२ । मन्त्र ८)

पदार्थः- हे [अग्ने] पदार्थ विद्या के जानने हारे (अंगिरः) विद्या के रसिक विद्वान् पुरुष जिस पुरुषार्थी

(ते) आपकी अग्नि के समान (शतम्) सैकड़ों (आवृतः) आवृत्ति रूप क्रिया और (सहस्रम्) हजारों (ते) आपके (उपावृतः) आवृत्ति रूप सुखों के भाग (सन्तु) होवें (अथ) इसके पश्चात् आप इनसे (पोषस्य) पालक मनुष्य की (पोषेण) रक्षा से (नष्टम्) परोक्ष भी विज्ञान को (नः + पुनः) हमारे लिये फिर भी (आकृधि) अच्छे प्रकार कीजिये ।

तथा बिगड़ी हुई (रयिम्) प्रशंसित शोभा को (पुनः-नः) फिर भी हमारे अर्थ (आकृधि) अच्छे प्रकार कीजिये । ऋषि दया नन्द कृत अर्थः- इस मन्त्र में बार २ अंगिरा से विज्ञान अर्थात् शिल्प, की याचना की गई है । अतएव अंगिरा को पूर्ण शिल्पी विश्व-कर्मा ही कह सकते हैं ।

अथ पूर्ण शिल्पी धीमान् अंगिरा ऋषि के वंश की परम्परा:-

> [illegible] णुतां गिरसो वंशमग्नेः पुत्रस्य धीमतः ।
> [illegible] सम्भूता: भारद्वाजाः सगौतमाः ॥
> [illegible]ङ्गिरसो मुख्यास्त्वषू मन्तो महोजसः ।
> [illegible] चैव मारीची कार्दमी च तथा स्वराट् ॥
> [illegible] च मानवी कन्या तिस्रो भार्या ह्यथर्वणः ।
> [illegible]ङ्गिरसः पत्न्यस्तासु वक्ष्यामि सन्ततिम् ॥
> [illegible] दायादास्तासु जाता कुलोद्वहाः ।
> [illegible] महता चैव तपसा भावितात्मनाम् ॥

बृहस्पतिः सुरूपायां गौतमः सुषुवे स्वराट् ।
अवन्ध्यं वामदेवं च उतथ्यमुशिजम् तथा ॥
धिष्णुः पुत्रस्तु पथ्यायां संवर्तश्चैव मानसः ।
विचित्रश्च तथायास्य शरद्वांश्चाप्युतथ्यजः ।
उशिजो दीर्घतमा बृहदुक्थो वामदेवजः ।
धिष्णोः पुत्रः सुधन्वा च ऋषभश्च सुधन्वनः ॥
रथकाराः स्मृता देवा ऋषयो ये परिश्रुताः ।
बृहस्पतेः भरद्वाजो विश्रुतः सुमहायशाः ।
अङ्गिरसस्तु सम्भूतिः देवनाङ्गिरसः श्रृणु ।
बृहस्पतेयवो यास्यो देवा ह्यङ्गिरसः स्मृतः ॥

(वायु पुराण अ० ४)

अर्थ- अग्नि के पुत्र धीमान् अंगिरा ऋषि के वंश को सुनो जिसके कुल में गौतम और भारद्वाज उत्पन्न हुए हैं ।[illegible] अंगिरा के कुल में उत्पन्न हुए देव (इपुमन्तः) पांच संख्या वा[illegible] अर्थात्-पञ्चाल, पांच प्रकार से शिल्पों के कर्ता अथवा [illegible] नामक सोम याग करने वाले बड़े

वृतं कृणुताग्नि ब्रह्माग्नि यज्ञो० । (यजु०अ० ४।११)

(ऋषि दयानन्द कृत)

भावार्थः- मनुष्यों को जिसकी अग्नि संज्ञा है उस ब्रह्म को जानकर उसी की उपासना करनी चाहिए । अतः ईश्वर का नाम भी अग्नि है ॥

तेज धारी मुख्य हुए हैं । मरीचि प्रजापति की कन्या स्वरूपा, कर्दम प्रजापति की कन्या स्वराट् ॥९७॥ तथा मनु, प्रजापति की कन्या पथ्या यह अथर्वा (अंगिरा) ऋषि की तीन स्त्रियां हुईं, अंगिरा की इन तीनों स्त्रियों में जो सन्तानें उत्पन्न हुईं अब उनको कहता हूं ॥९८॥ अथर्वण (अंगिरा) के दायाद कुल का चलाने वाले महाज्ञानी बड़ी तपस्या से युक्त हो संसार में [illegible] ॥९९॥ अंगिरा की स्वरूपा स्त्री में बृहस्पति तथा गौतम, दूसरी स्वराट् में अवन्ध्य, वामदेव, उतथ्य और उशिज, तथा अंगिरा की तीसरी पथ्या नामक स्त्री में धिष्णु और संवर्त इन दो पुत्रों ने जो ऐसे सुन्दर थे, मानो मन से उत्पन्न हुए हों जन्म धारण किया ।

इस प्रकार अंगिरा की तीनों स्त्रियों से यह आठ पुत्र उत्पन्न हुए । इनमें से उतथ्य के विचित्र, अयास्य तथा शारद्वान यह तीन पुत्र हुए ॥१००।१०१॥ वामदेव के उशिज् दीर्घतमा तथा बृहदु-क्थ यह तीन पुत्र हुए । धिष्णु✱ के सुधन्वा✱✱ (विश्वकर्मा) तथा सुधन्वा (विश्वकर्मा)

✱ "धिष्णु" यह शब्द वायु पुराण में पाठ भेद से ही लिखा [illegible] होता है क्योंकि महाभारत में उपरोक्त धिष्णु के स्थान [illegible] सुधन्वा का ही नाम आया है । ✱✱सुधन्वा = विश्वकर्मणि ([illegible] शब्द कल्पद्रुम कोष) अर्थात् सुधन्वा विश्व कर्मा के अर्थ में आया है ।

के ऋत नामक पुत्र हुए।१०२। तथा बृहस्पति के महातेजस्वी, भारद्वाज जी उत्पन्न हुए हैं यह सब धीमान् अंगिरा ऋषि के वंश में उत्पन्न हुए, रथकार (शिल्पी) हुए हैं जो कि देवता और ऋषि हुए प्रसिद्ध हैं।१०३॥

तथा:–

महाभारत अनुशासन पर्व अ० ८३ में लिखा है कि–

अष्टौ चांगिरसः पुत्राः आग्नेयास्तेऽप्युदाहृताः।
बृहस्पति रुतथ्यश्च पयस्य शान्तिरेव च।
घोरो विरूप संवर्तः सुधन्वा चाष्टमः स्मृतः॥

अर्थ अग्नि से सम्बन्ध रखने वाले अंगिरा ऋषि के आठ पुत्र हुए। जिनमें–१– बृहस्पति, २– उतथ्य, ३– पयस्य, ४– शान्ति, ५– घोर, ६– विरूप, ७– संवर्त और आठवें का नाम सुधन्वा (विश्वकर्मा) है।

शिल्पाचार्य महर्षि भृगु

एवा वो स्तोममश्विनावकर्मा तक्षाम भृगवो न रथम्। न्यमृक्षाम योषणां न मर्ये नित्यं न सूनुं तनयं दधानाः ॥१४॥
[ऋग्वेद मं० १० । सू० ३९ । मन्त्र १४]

अर्थ– (इस मन्त्र का भावार्थ देखो 'विश्वकर्मा वंश भास्कर' अ० ४, पृ० ८५) इस मन्त्र में सायणा–

चार्य जी भृगु का अर्थ रथकार करते हैं। यथा:– रथकाराः भृगवः इससे यह स्पष्ट हो गया है कि महर्षि भृगु जी भी रथकार अर्थात् पूर्णशिल्पी ही हुए हैं ॥१७॥

तथा–

भृगु रत्रिर्वसिष्ठश्च विश्वकर्मा मयस्तथा।
नारदो नग्नजिच्चैव विशालाक्ष पुरन्दरः ॥१८॥
ब्रह्मा कुमारो नन्दीशः शौनको गर्ग एव च।
वासुदेवोऽनिरुद्धश्च तथा शुक्र बृहस्पतिः ॥१९॥
अष्टादशैते विख्याता शिल्प शास्त्रोपदेशकाः।
संक्षेपेणोपदिष्टन्तु मन्वे वैमत्स्य रुपिणा ॥२०॥
(मत्स्य पुराण। अ० २५२। श्लोक २,३,४)

अर्थ– सूत जी कहते हैं कि– भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, विश्वकर्मा, मय, नारद, अग्निजित, विशालाक्ष, इन्द्र ॥१८॥ ब्रह्मा, कुमार नन्दीश, शौनक, गर्ग, वासुदेव, (कृष्ण) अनिरुद्ध, शुक्राचार्य और बृहस्पति यह अठारह शिल्पी शिल्प शास्त्र की विद्या का उपदेश करने वाले सब लोकों में प्रसिद्ध हुए हैं। इस प्रकार मत्स्य जी ने मनु के आगे शिल्पाचार्यों का संक्षेप से ही वर्णन किया है ॥१९॥२०॥

तथा–

[illegible] कश्यपश्चैव भृगु गौतम भार्गवौ।
[illegible] ऋषिविश्वश्च बौधको यमनो मणिः ॥२१॥

पाराशरादय: सर्वे शिल्प शास्त्र विशारदा: ।
दैवज्ञो मानसारश्च दीप्तश्चात्रि मरीचय: ॥२२॥
वैखानसोऽथ कौण्डिन्यो शिल्प शास्त्रे तु धीमता: ॥२३॥
गार्गेयागमे※ अ० १। श्लो० २१।२२।२३–वि० ब्र०
कु० सं० ३। पृ० ५० से ७०)

अर्थ– गार्गेय कहता है कि– अगस्त्य, कश्यप, भृगु, गौतम परशुराम, गौरादि ऋषि, बोधक, यमनाचार्य, मणि ॥२१॥ पाराशर, दैवज्ञ मानसार, दीप्त, अत्रि, मरीचि वखानस और कौण्डिय आदि वह समस्त ऋषि लोग शिल्प शास्त्र की विद्या में निपुण अर्थात् उत्तमोत्तम शिल्पीय पदार्थों की रचना में विशेष बुद्धि रखने वाले (कालान्तर में विश्व कर्मा ही) हुए हैं।।२२।२३॥

इसमें वेद का भी यह वाक्य है कि:–

येनऋषयस्तपसा सत्रमायन्निन्धाना अग्निस्वराभरन्त: ।
तस्मिन्नहन्निदधेनाके अग्नियमाहुर्मनवस्तीर्ण बर्हिषम्।२४।
यजुर्वेद । भाषा भाष्य । अ० १५ । मन्त्र ४६

※गार्गेयागम अथर्व परिशिष्टमध्ये गर्ग, गार्गेय, वृद्धगर्ग वगैरेचा उल्लेख आहे। योवरुन असे वाटते की यांचा गर्गाशी पूर्ण सबन्ध असावा या प्रकार चा उल्लेख प्रो० कर्न यांचा वराहमिहिराच्या बृहत्संहितेच्या प्रस्ताव नेत आला आहे वेबाकृतहि, इ० लि० पान २५२। २५३।

भावार्थ–जिस प्रकार से वेद पारग विद्वान् (ऋषि) लोग सत्रका अनुष्ठान कर बिजली आदि पदार्थोंको उपयोग में लाके समर्थ होते हैं उसी प्रकार मनुष्यों को समृद्धि युक्त होना चाहिये।

इत्यादि प्रकार सेजो विद्वान वेद मन्त्रोंके दृष्टा अर्थात् वेदार्थ के वक्ता हुए हैं वह समस्त ऋषि लोग सुखों को निमित्त नाना प्रकार के शिल्पीय पदार्थों की रचना करने वाले पूर्ण विज्ञानी अर्थात् शिल्पी ही हुए हैं।

इत्यादि प्रमाणों से पाठक स्वयं समझ गये होंगे कि प्राचीन (आदि के) और बाद के हुए समस्त ऋषि लोग शिल्प द्वारा लोकों की उन्नति करने वाले कालान्तर में विश्वकर्मा ही हुए हैं।

परन्तु यहां हम बाद के हुए शिल्पज्ञ ऋषियों का वर्णन न करके केवल आदि के हुए शिल्पी ब्राह्मणों के गोत्र प्रवर्तक शिल्पज्ञ ऋषियों केही नामोंका पुनः स्मरण दिलाते हैं जैसे कि पूर्वोक्त वेद मन्त्र में अंगिरा का नाम मत्स्य पुराण के श्लोक में भृगु अत्रि तथा गार्ग्यागम के श्लोक में मरीचि के नाम का उल्लेख है अतः यही पांचों शिल्पज्ञ गोत्र तथा प्रवरों के प्रवर्तक हुए हैं इति।

पाराशरादयः सर्वे शिल्प शास्त्र विशारदाः ।
दैवज्ञो मानसारश्च दीप्तश्चात्रि मरीचयीः ॥२२॥
वैखानसोऽथ कौन्डिन्यो शिल्प शास्त्रेसु धीमताः ॥२३॥

गार्गेयागमे※ अ०१ । श्लो० २४ । २५ । २६-बि० ब्रा०
कु० स० ३ । पृ० ५० से ७०)

अर्थ-गार्गेय कहता है कि-अगस्त्य, कश्यप, भृगु, गौतम, परशुराम, गौरादि ऋषि, बोधक, यमनाचार्य, मणि ॥२१॥ पाराशर, दैवज्ञ मानसार, दीप्त, अत्रि, मराचि वैखानस और कान्डिय आदि यह समस्त ऋषि लोग शिल्प शास्त्र की विद्या में निपुण अर्थात् उत्तमोत्तम शिल्पाय पदार्थों की रचना में विशेष बुद्धि रखने वाले (कालान्तर में विश्वकर्मा ही) हुए हैं ॥२२।२३॥

इसमें वेद का भी यह वाक्य है कि:—
येनऋषयस्तपसा सत्रमायन्निन्धानां अग्निः स्वराभरन्तः ।
तस्मिन्नहंनिदधेनाके अग्नियमाहुर्मनवस्तीर्णं वर्हिषम् ॥
यजुर्वेद । भाषा भाष्य । अ० १५ । मन्त्र ४९

※गार्गेयागम अथर्व परिशिष्टमध्ये गर्ग, गार्गेय, वृहद्गर्ग वगैरेचा उल्लेख आहे । योवरून असें वाटते की यांचा गर्ग ऋषी यांशी पुण सबन्ध आसावा याप्रकार चा उल्लेख प्रो० कर्न ने वराहमिहिराच्या वृहसहितेच्या प्रस्ताव नेत आला आहे वेन हि. इ० लि० पान २५२ । २५३ ।

...वा भृगु का अर्थ रथकार करते हैं । यथाः—
"रथकारा भृगवः" इससे यह स्पष्ट होगया है कि महर्षि भृगुजी भी रथकार अर्थात् पूर्ण शिल्पी ही हुए हैं ॥१७॥

तथाः—

भृगु रत्रिर्वसिष्ठश्च विश्वकर्मा मयस्था ।
नारादोऽनगन जिच्चैव विशालाक्ष पुरंदरः ॥१८॥
ब्रह्मा कुमारो नन्दीशः शौनको गर्ग एवच ।
वासुदेवोऽनिरुद्धश्च तथा शुक्र बृहस्पतिः ॥१९॥
षष्ठादशैते विख्याता शिल्प शास्त्रोपदेशकः ।
षष्ठादशैते विख्याता शिल्प शास्त्रोपदेशकः ।
संक्षेपेणोपदिष्टन्तु मन्वे वैमत्स्य रूपिणा ॥२०॥
(मत्स्य पुराण । अ० २५२ । श्लो० २ । ३ । ४)

अर्थ—सूत जी कहते हैं कि-भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, विश्वकर्मा, मय, नारद, अग्दिजित, विशालाक्ष, इन्द्र । १८॥ ब्रह्मा, कुमार, नन्दीश, शौनक, गर्ग, वासुदेव (कृष्ण) अनिरुद्ध, शुक्राचार्य और बृहस्पति यह अठारहा शिल्पी शिल्पशास्त्र की विद्या का प्रचार करने वाले सब लोकों में प्रसिद्ध हुए हैं । इस प्रकार मत्स्य जी ने यह भृगु के आदि शिल्पाचार्यों का संक्षेप से ही वर्णन किया है ॥१८।१९।२०॥ तथा—

अगस्त्यः कश्यपश्चैव भृगुगौतम भार्गवो ।
गौरादि ऋषि गर्गश्च बोधको यमनो मणिः ॥२१॥

अथ पंचमोऽध्यायः

गोत्र तथा प्रवर ।

अब हम इस अध्याय में गोत्र और प्रवर का स्वरूप कहेंगे किन्तु इनमें से प्रथम यह विदित करायेंगे कि गोत्र किस को कहते हैं ।

पाणिनि जी ने गोत्र का यह स्वरूप कहा है कि:—

अपत्यं पौत्र प्रभृति गोत्रम् ॥१॥ (४।१।१६२)

अर्थात्-पौत्र (पोते) से आगे चलकर जितनी भी सन्तान हों वह सब गोत्र संज्ञक होती है ।

इससे यह स्पष्ट हो गया कि सन्तान अथवा सन्तान परम्परा का नाम गोत्र है अथवा दूसरे शब्दों से यह कहिये कि वंश का नाम गोत्र है ।

इसी प्रकार अमर कोष में भी कहा है कि:—

संततिर्गोत्र जनन कुलान्यभिजनान्वयौ ।
वंशोऽन्ववायः सन्तानोवर्णाः स्युर्ब्राह्मणादयः ॥२॥

(अमर को० । कां० २ । अ० वर्ग ७ श्लो० १)

अर्थ—संतति, गोत्र, जनन कुल, अभिजन, अन्वय, वंश, अन्ववाय और सन्तान यह नौ शब्द वंश के वाचक हैं ।

इसी प्रकार वंश ही का नाम गोत्र है । गोत्रका[illegible]

(वंश चलाने वाले) ऋषि को गोत्र-ऋषि गोत्र पुरुष, अथवा संक्षेप में गोत्र ही कहते हैं ।२।

इस विषय में बोधायन आदि ऋषियों का यह कथन है कि–

विश्वामित्रो जमदग्निः भरद्वाजोऽथ गौतमः ।
अत्रि र्वसिष्ठः कश्यप इत्येते सप्तर्षयः ।३।
सप्तानामृषीणामगस्त्याष्टमाना यदपत्यः तद् गोत्र मित्युच्यते ।४।

अर्थात्– विश्वामित्र, जमदग्नि, भारद्वाज। गौतम अत्रि, वशिष्ठ और कश्यप यह सप्तर्षि है । और सातों में आठवें अगस्त्य ऋषि की सन्तानों के जो नाम है वह गोत्र कहलाते हैं ३ । ४

तथा–

भृग्वांगिरसौ लोके लोक सन्तान लक्षणौ ।५।
(महाभारत अनुशासन पर्व अ० ८३)

अर्थात्– भृगु और अंगिरा ये दोनों ऋषि संसार में वंशों [illegible] के चलाने वाले हुए हैं ।

इस प्रकार भृगु, अंगिरा, विश्वामित्र, जमदग्नि, भारद्वाज गौतम, अत्रि, वशिष्ठ और कश्यप और अगस्त्य इन्हीं दश [illegible] [illegible] रूप से अनेक गोत्र प्रचलित हुए हैं । [illegible] का स्वरूप जानना ।५।

पंचम अध्याय

अत्र प्रवरों का स्वरूप कहते हैं–

ऋषयोदशतेषान्तु सन्तता वृणितांगताः।
यज्ञ प्रवोयमाणास्ते प्रवरा इति कीर्तिताः ॥

(गोत्र प्रवर निर्णय । निबं० कदम्ब के पृ० २५३)

अर्थात्– बौधायन कहता है कि यह भृगु आदि गोत्र कर्त्ता दश ऋषि हुए है इन दश ऋषियों को जो सन्ताने हुई उनको ही यज्ञ कार्य सम्पादन में पुत्र, पिता, पितामह आदि के नामों सहित प्रवर कहते हैं ॥६॥

यथा–

गोत्र भूतस्य ऋषेः पितृपितामह प्रपितामहादयः एव प्रवराः। तेषां च पितृ पुत्र पौत्र क्रमेण वरणं होतुः । तथा च शतपथश्रुती प्रवरा-नानुक्रम्योक्तम्– पितैवाग्रेऽथ पुत्रोऽथ पौत्रः ॥इति॥७॥

(प्रवर दर्पण । निबन्ध कदम्ब के पृ० १०७-१०८)

अर्थात्– गोत्रकार ऋषि के पिता पितामह, प्रपितामह आदि को प्रवर कहते हैं। यज्ञ में जब होता का वरण किया जाता है अर्थात् आप मेरा यज्ञ सम्पादन करें उससे ऐसी प्रार्थना की जाती है तो उन प्रवर ऋषियों में प्रथम पिता का, तत्पश्चात पुत्र पौत्र आदि का नाम लिया जाता है। इस प्रकार शतपथ ब्राह्मण में भी कहा–

गया है कि:–"पहले पिता ही नाम ले उसके पीछे पुत्र का और पुनः पौत्र का" ॥७॥

फिर आगे इसी ग्रन्थ के पृ० १०८ में लिखते हैं कि:-

अतएवांगिरस बार्हस्पत्य भारद्वाजेत्यादी तथैवदृश्यते । आंगिरसेत्यादि तद्धितस्तु यजमानस्य ऋषिसम्बन्ध बोधनार्थः ॥८॥

अर्थात्-जैसे भरद्वाज गोत्र के तीन प्रवर हैं अर्थात् अंगिरा, बृहस्पति और भरद्वाज । यहां यह जानना चाहिये कि अंगिरा का पुत्र बृहस्पति तथा बृहस्पति का पुत्र भरद्वाज है । यजमान का ऋषि से संबन्ध बतलानेके लिये प्रवर ऋषियों के नाम ग्रन्थो में तद्धितान्त ही लिखे होते हैं जैसे कि-आंगिरस, बार्हस्पत्य, भारद्वाज । अर्थात् अंगिरा की सन्तान को आंगिरस, बृहस्पति की सन्तान को बार्हस्पत्य तथा भरद्वाज की सन्तान को भारद्वाज कहते हैं । अतएव भरद्वाज गोत्र के प्रवर प्रायः अंगिरा बृहस्पति, भरद्वाज के स्थान में आंगिरस, बर्हस्पत्य तथा भारद्वाज नाम से ही उच्चारण किये जाते हैं इसी प्रकार सब जगह जानना चाहिये ॥८॥

प्रवर मञ्जरी । निबंध कदम्ब, के पृष्ठ ७ पर लिखा है कि:—

होतृ प्रवरे रध्वर्यु प्रवरैश्च तेषां तेषांमंत्र दृशामपत्य ।
सम्बन्धनेन सादृश्य सम्बन्धनेन चाग्निरेवाह्वनीयः ।।
प्रार्थ्यते तस्य प्रकर्षेण प्रार्थनानि तैस्तैमंत्र दृग्भिः ।
एक द्वित्रिपंच सख्याकैः विशिष्टानि एकार्षेयाः ।
द्वार्षेयाः त्र्यार्षेयाः पञ्चार्षेयाः प्रवरा इत्युच्यन्ते ।९।।

अर्थात्—यज्ञकार्य को संपादन करने वाले होता तथा अध्वर्यु आदि ऋत्विज ही प्रवर हैं तथा जो उनको पुत्र, पौत्र आदि उनके साथ संबन्ध रखने वाले मंत्र दृष्टा ऋषि है, वह भी उन ही के समान सम्बन्ध रखने वाले यज्ञ की सफलताके अर्थ अग्नि (ईश्वर) से प्रार्थना करते अथवा वर मांगते हैं, उनकी उस प्रकर्षण प्रार्थना मे वे मन्त्र दृष्टा ऋषि, एक,दो, तीन तथा पांच की संख्या में विशेष बुद्धि विशिष्ट ऋषि गण प्रवर कहलाते है, अर्थात्-एक प्रवर वाले ऋषि को एकार्षेयः दो प्रवरवाले ऋषिका द्वयार्षेयः तीन प्रवरवाले गोत्र-ऋषिको त्र्यार्षेय और पांचप्रवर वाले गोत्र-ऋषिको पञ्चार्षेय कहतेहैं ।।९।।

तथाः—

अथैकेवामेकं वृणीतेद्वौ वृणीतेत्रीन् वृणीतेनचतुरो
वृणीतेनपञ्चाति वृणोते इति विज्ञायते ।।१०।।

(प्रवर मञ्जरी=निबन्ध कदम्ब पृ० १३)

अर्थात्-कोई एक ऋषि का नाम संकीर्तन कर अग्नि

का वरण करते हैं, कोई दो का, कोई तीन का तथा कोई पांच का नाम संकीर्तन कर अग्नि का वरण करते हैं। किन्तु चार अथवा पांच से अधिक ऋषियो के नामों का संकीर्तन नही किया जाता। इस प्रमाण से किसी के प्रवर ऋषि एक, किसी के दो, किसी के तीन तथा किसी के पांच होते हैं। चार अथवा पांच से अधिक प्रवर किसी के नही होते।

तात्पर्य यह है कि प्राचीन समय में प्रवर के ज्ञान बिना पुरुषको यज्ञाधिकार नहीं था। होता तथा अध्वर्यु नामक ऋत्विक् (यज्ञकार्य कर्त्ता) लोग यजमान के लिए यज्ञ में उसके प्रवर ऋषियो केनामों को भिन्न २ प्रकार से उच्चारण कर अग्नि (परमेश्वर) से प्रार्थना किया करतेथे। कल्पना करो कि एक यजमान का मुद्गल गोत्र है। अध्वयु उसके प्रवर-ऋषियो के नामों का गोत्र ऋषि के पिता से आरम्भकर प्रवर-ऋषियों के पिता पुत्र क्रम से प्रारम्भ नकर उलटे क्रम से संकीर्तन करता था। तथा यजमान का प्रवर-ऋषियों के साथ सादृश्य संबन्ध बताने केलिये हरएक प्रवर-ऋषि के नाम के साथ 'वत्' प्रत्यय लगा देता था।

यथाः—

मुद्गलयवत्, भर्म्यश्वत्व, अंगिरसत्व । अध्वर्यु—

इसप्रकार ऋषियो के नामों को अध्वर्यु से उल्टे क्रम से बोला जाताथा, परन्तु प्रवर ऋषियों केपिता पुत्रआदि के नामों को सीधे क्रमसे उच्चारण करताथा अर्थात् यजमान का प्रवर ऋषियों के साथ संतान संबन्ध बतलाने के लिये हरएक प्रवर ऋषि के नामको तद्धितान्त बनाकर बोलता था यथाः–आंगिरस, भार्म्यश्व मौद्गल्येति ।होता।

अर्थात्-आंगिरस (अंगिरा की संतान) भार्म्यश्व (भर्म्यश्व की संतान) मौद्गल्य (मुद्गल की संतान)इस प्रकार बोलाजाता था तथा जिस गोत्रका वही एक प्रवर होतो वह गोत्र से दूसरा ही होता है। इत्यादि प्रकार से प्रवर का स्वरुप जानना ॥१०॥इति ॥

— —

अथ षष्टोऽध्यायः

[१]गोत्रकार ऋषियों की परम्पराः—

धीमान् ब्राह्मणो के आदि वंशशिरोमणि भृगु, अंगिरा मरीचि और अत्रि यह चार ऋषि हुए।

कालान्तर में भृगु के वंश में जमदग्नि नामक ऋषि उत्पन्न हुए। अंगिरा के वंश में गौतम और भरद्वाज। मरीचि के वंशमें कश्यप, वसिष्ठ और अगस्त्य तथाअत्रि के वंश में विश्वामित्र जी उत्पन्न हुए।

अलौकिक तप और विद्या के प्रभाव केकारण विश्वामित्र, जमदग्नि, भरद्वाज, गौतम, अत्रि, वसिष्ट और कश्यप यह सातों ऋषि अति प्रसिद्ध हुए हैं। अतः इनको सप्तर्षि भीकहते हैं। तथाइनमें आठवें अगस्त्यऋषि भी इनही की भांति महान् ऋषि हुए हैं। ये आठों ऋषि गुरु शिष्य के सम्बन्ध से आदि शिल्पाचार्य भगवान् विश्वकर्मा के पुत्र ही हैं क्योंकि इनको ज्ञान और विज्ञान आदि की समस्त शिक्षा विश्वकर्मा ने ही प्रदान की थी (देखो पीछे पृ०२)इन आठों ऋषिजनों नेअपने अलग२ गोत्र चलाये।

इन आठों में भृगु तथा अंगिरा इनदो ऋषियों का नाम जोड़ देने से यह धीमान् ब्राह्मणों के मुख्य दश गोत्र प्रवर्तक ऋषि हुए।

इस प्रकार आदि के भृगु, अंगिरा और अत्रि यह तीन ऋषि और बाद के हुए जमदग्नि, गौतम, भरद्वाज, कश्यप, वसिष्ट, अगस्त्य और विश्वामित्र यह सब मिल कर दश मुख्य गोत्रकार ऋषि हुए।

[illegible]विमुल स्यात पहती। विश्वेश वेद पढ़वि ति। सप्तर्षि [illegible]। प्रविण विद्यार्थी सर्व ही। त्यांत अगस्ति महा हट्ट। वेद [illegible] अ तां त्वष्टाचार्य संतति की गोष्ठी। श्रवण करावी [illegible]। विश्वकर्मा जगत् गुरु। ऐसा सर्व शास्त्रों चा निर्वाह। (विश्वकर्मा पुराण अ० ३। रा ओवी ६३ ।६७-६६। विश्वब्रह्म [illegible] सं० २ पृ० ७८ से उ०)

इनके वंशों में आगे चलकर जो आत्मदर्शी मंत्र दृष्टा ऋषि हुए उनके नामों से भी शाखा प्रशाखाओं के रुपसे अनेक गोत्र प्रचलित हुए हैं। जैसा कि बृहदारण्यक उपनिषद् के अ० १। ब्रा० ५। २१ में लिखा है।

यथाः—

तेनहवाव तत्कुलमांचक्षते यस्मिन्कुले भवतीय एववेद।

अर्थ—प्राणस्वरुप ब्रह्म को जानने वाला जिस कुल में होता है उसके नाम से ही उसके कुल को लोग कहने लगते हैं।

आत्म साक्षात्कार करने के कारण जिनके निर्मल हृदयों में मन्त्र [वेद अथवा सृष्टि संबन्धी गुप्त भेद] स्वयं ही प्रति भाषित होनेलगते हैं जैसेंकि सोकर उठेहुए पुरुष के हृदय में सब ज्ञान अपने आप ही जाग उठता है। ऐसे महा पुरुषों को मन्त्र दृष्टा ऋषि कहते हैं।

कालान्तर में ऐसे ही लोकोत्तर महामति पुरुषों के नामों से पहले समय में अनेकानिक गोत्र चल निकले थे।

इस प्रकारः—

गोत्राणांच कोटि संख्या [प्रवर मंजरी। निबन्ध कदम्ब पृ० ६]

बोघायन कहता है कि गोत्रों की संख्या क्रोड़ों में हो गई।

अतः श्रीमान् ब्राह्मणों के मुख्य दश गोत्रों के ही शाखा प्रशाखाओं के भेद से अनेक गोत्र हो गये जैसा कि पाठकों को नीचे लिखे गोत्रकार ऋषियों के वंश वृक्षों से विदित होगा।

—०००—

सृष्टिकर्त्ता विश्वकर्मा परमेश्वर

भृगुः	अंगिराः	मरीचिः*	अत्रिः
भृगुः	अंगिराः	मरीचिः	अत्रिः

किसी का ऐसा भी मत है कि:—

*[illegible] मरीचिश्च, मर्यांगत्वात्रि एवच। [illegible] विरिंचि— [illegible] भृगोस्तथा। विश्वर्शंगि [illegible] राश्चेति पंच [illegible]॥

(१) भृगु वंश वृक्ष नं० १

३ स्वष्टा (ब्रह्मा) वंश वृक्ष: नं० ३ ।

|

स्वायम्भुवमनु:

|

उत्तानपाद:

|

ध्रुव:

|

श्लिष्टि:

|

रिपु:

|

चाक्षुष:

|

मनु:

|

कुरु:

|

अंग

|

वेन: (गोत्र) ×

|

पृथु:

× (अनेवैश्‍तक: भृगुकुले गत:-पृ० वंश ४)

(८) अंगिरा वंशवृक्ष नं० २

उतथ्यः, अयास्यः, वामदेवः, गौतमः, संवर्तः सुधन्वा, उशिजः, बृहस्पतिः

(१२)

दीर्घतमा वा गोतम (सप्तर्षिगोत्रकारः)

ऋभु (आर्भव) विभ्वाः वाज

(१४)

कक्षीवान कारेणुपालः वामदेवः गौतमः कुत्सः

(भ्रगु:) भरद्वाजः (सप्तर्षिगोत्रकारः)

(११)

१५

कोमण्डः वृहदुक्थ्यः शारद्वान्तः शौङ्गः अग्निवेशः वान्दनः गर्गः आमहीयः

*अंगिरा

शैशिरः मातवचसः शिनिः कपिः (१६)

(१०) पृषदश्व

(७) ऋक्ष

(देखो पृष्ठ अगला)

+विश्वामित्र (गोत्रकारः सप्तर्षिः)

(३५)

अश्मरथः (३७) — बाधुलः
रेवणः — कतः (४०) — इन्द्रः
शालङ्कायनः (३८) — शालकील: अष्टक: पूरण: ।
रेणुमानः — लोहितः
अघमर्षणः
गाधी: — रेणु: (वेणु:)
देवश्रवा — देवतर:
देवरातः — उदल (३६)
मधुच्छन्दा (४१) — ध्वज: रोहित: धनजय: (४२) अष्टक: अघमर्षण:

* वितथ:

सुहोत्र: — बृहत्पुत्र:
महावीर्य: — उरुक्षय:
नर: — संकृति:
गर्ग: — शिनि:

कपि: (अङ्गिरःकुले गतः) (अङ्गिरःकुले गतः)

ॐअजमीढ़ः

वाध्यश्व — दिवोदास — मित्रयुवः (भृगुकुलेगतः)

भर्म्यश्वः — मुद्गलः (अंगिर कुले गतः)
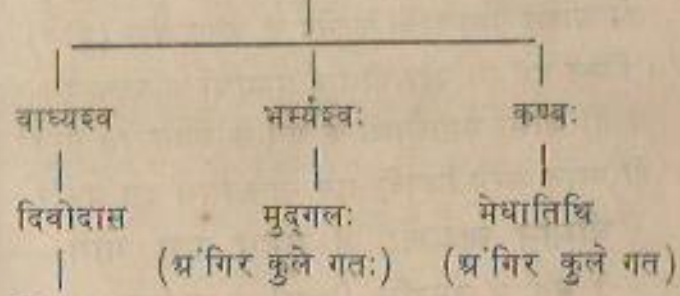
कण्वः — मेधातिथि (अंगिर कुले गत)

द्विगोत्रीयः—जातुकर्ण्यः (४५)

वसिष्ठैरत्रि भिश्चापि जातुकर्ण्यस्य नान्वय ।

अर्थात्—वसिष्ट और अत्रि की कन्या से जातुकर्ण्य नामक ऋषि हुए ।

लौगाक्षिः (४६)

लौगाक्षिः कश्यप सुतो वसिष्ठे नोपनीतवान ।

अहर्वसिष्ठो रात्रौतु कश्यपस्तेन स समृतः (नि० कवम्बे)

अर्थ—लौगाक्षि कश्यप का पुत्र हुआ वसिष्ठ ने उस का उपनयन कराया इस कारण वह दिन में वसिष्ठ और रात्रि में कश्यप कहलाता है ।

अतएव जातुकर्ण्य और लौगाक्षि यह दोनों द्विगोत्रीय हैं अर्थात् इन दोनों के दो २ गोत्र माने जाते हैं ।

इस प्रकार इन भृगु आदि चारों ऋषियों के वंशवृक्षों की शाखा प्रशाखाओं के भेद से अनेक वंश (गोत्र) चले है। किन्तु हम तो यहां धीमान् ब्राह्मणों के मुख्य दश गोत्रों के ही शाखा प्रशाखाओं के रूप से केवल ४७ गोत्रों का ही वर्णन करेंगे जिनके नाम नीचे लिखे इस प्रकार हैं:-

धीमान् ब्राह्मणों के मुख्य दश गोत्र:—

१ भृगु, २ जमदग्नि (वत्स), ३ अंगिरा, ४ गौतम, ५ भरद्वाज, ६ कश्यप, ७ वसिष्ठ, ८ अगस्ति, ९ अत्रि और १० वां विश्वा मित्र है।

आगे समस्त ४७ गोत्रों के सुनाम

१ भृगु, २ वीतहव्य, (यास्क) ३ मित्रयुव ४ वैन्य, ५ शौनक, ६ जमदग्नि (वत्स), ७ विद, ८ अंगिरा (अयास्य), ९ उशिज, १० पृषदश्व, ११ कारेणुपाल, १२ गौतम, १३ शरद्वन्त, १४ भरद्वाज, १५ भार्ग, १६ कपि, १७ ऋक्ष १८ कण्व, १९ मुद्गल, संकृति, २१ रथीतर, २२ विष्णु वृद्धा, २३ हरित, २४ कश्यप, २५ नैध्रुव, २६ शाण्डिल्य, २७ वसिष्ट, २८ अगस्ति, २९ कुण्डिन, ३० उपमन्यु, ३१ पराशर ३२ महेन्द्र, ३३ अत्रि, ३४ गविष्ठिर, ३५ विश्वामित्र ३६ उद्दालक, ३७ अश्मरथ्य, ३८ शालंकायन, ३९ कौशिक, ४० कात्यायन, ४१ मधुच्छन्दस ४२ धनंजय, ४३ लौहित

अच ४३ लोहित ४४ रौक्ष ४५ जातुकर्ण्य ४६ लौगाक्षि तथा ४७ वाकुलगोत्र है। इस प्रकार यह धीमान् ब्राह्मणों के ४७ गोत्र हैं इनके ५१२ शासन हैं जो कि आगे अध्याय ९ में इन ही ४७ गोत्रों के साथ अर्थात् जिस जिस गोत्र के वह हैं उसी उस गोत्र के साथ संगठित किये जायेंगे आगे जो यह अजीतपुरिया आदि ५१२ शासन लिखे गये हैं यह भी गोत्र ही माने जाते हैं जैसा कि पीछे अध्याय ६ के पृष्ट ७२ में कहा गया है यही कारण है कि ब्राह्मणादि कुलों में वर और कन्या पक्षों का परस्पर शासन न मिलता तो उनका विवाह सम्बन्ध होता देखा गया है।

अथ सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अब हम इस अध्याय में पाठकों के जानने के लिये धीमान् ब्राह्मणों के मुख्य और सामान्यता से वेदादि का वर्णन करके पुनः आगे नवें अध्याय में धीमान् ब्राह्मणों के शासन, गोत्र प्रवर, वेद, शाखा, शिखा और सूत्र आदि का स्पष्ट वर्णन करेंगे॥

धीमान् (शिल्पी) ब्राह्मणों के सामान्य और मुख्य वेद:–

ऋगवेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद । यह चार वेद हैं ।

इनमें धीमान् ब्राह्मणों के सामान्यता से तो ऋग० यजु०, साम आदि सब वेद हैं और मुख्यता से इनका वेद अथर्व वेद है यथा:–

> आयुर्वेद: चिकित्सा शास्त्र ऋग्वेदस्योपवेद: ।
> धनुर्वेदो युद्ध शास्त्रं यजुर्वे दस्योपवेद: ॥
> गांधर्ववेद: संगीत शास्त्रं साम वेदस्योपवेद: ।
> स्थापत्य वेदो विश्वकर्मादि शिल्प शास्त्रं
> अथर्व वेदस्यो पवेद: ॥ (चरणव्यूह । खं ४)

अर्थ–आयुर्वेद जो कि चिकित्सा शास्त्र है, ऋग्वेद का उपवेद है । धनुर्वेद जोकि युद्ध शास्त्र है, यजुर्वेद का उपवेद है ॥ गांधर्ववेद जोकि संगीत शास्त्र है, सामवेद का उपवेद है । तथा स्थापत्यवेद (अथर्ववेद) जोकि विश्वकर्मा आदि का बनाया शिल्प शास्त्र है, अथर्ववेद का उपवेद है ।

इत्यादि प्रकार से यद्यपि धीमान् (शिल्पी) ब्राह्मणों के सामान्यता से ऋग, यजु तथा सामादि सब वेद हैं तथापि इनका मुख्य वेद अथर्ववेद ही है ।

क्योंकि:–

> अथर्वणस्योपवेद: शिल्पवेद: प्रकीर्तित: ।
> तस्मादाथर्वणा: प्रोक्ता सर्वे शिल्पिनएवच ॥
> (कौशलागम अ० ३ । तथा–ब्राह्मणोत्पत्ति मा० प्र० ४१)

अर्थात्–अथर्ववेद का उपवेद शिल्पवेद है । इस कारण सर्व शिल्पी ब्राह्मण अथर्ववेदी कहे जाते हैं । अतएव शिल्पी (धीमान्) ब्राह्मणों का मुख्य वेद अथर्ववेद है । और सामान्यता से ऋग, यजु, तथा साम आदि सब वेद हैं जैसा कि पाठकों को अगले अध्याय में धीमान् ब्राह्मणों के गोत्र प्रवरों के साथ सामान्यता से सब वेद लिखे मिलेंगे ।

शिखा:–

धीमान् ब्राह्मणों की शिखा (चुटिया) दक्षिणायनी है । क्योंकि जब यह धीमान् (शिल्पी) ब्राह्मण सन्ध्योपासना करते हैं तब अपनी शिखा में दक्षिण हाथ से ही ग्रन्थी लगाया करते हैं । अत: धीमान् ब्राह्मणों की शिखा दक्षिणायनी है ।

चारों वेदों के पांच नाम:—

वेदों के ऋग० यजु० साम तथा अथर्व, यह चार नाम हैं तथापि हमें इनके शास्त्रों में पांच नाम भी मिलते हैं और पांच ही ऋषि इनके प्राप्त कर्त्ता कहे गये हैं ।

यथा:—

ऋग्वेद एवाग्ने रजायत यजुर्वेदोवायोसाम
वेदआदित्यात् ।। (ऐतरेय ब्रा० पंचकम)

तथा:—

ब्रह्मवेद भृगु आंगिरावित् ।।(गोपथ ब्रा० ७ । ५)

अर्थ–अग्नि से ऋग्वेद उत्पन्न हुआ, वायु से अजुर्वेद तथा आदित्य से सामवेद उत्पन्न हुआ ।

ब्रह्म अर्थात्–अथर्ववेद भृगु तथा अंगिरा से उत्पन्न हुआ है । अथर्ववेद में शान्ति और पौष्टिक साधक अभिचार के मन्त्र पाये जाते हैं । उन दो रूपों के तात्पर्य से उस के दो भाग कहे जाते हैं ।

तां पञ्चस्व पश्व दृचि यजूंषि साम्नि शान्तेऽथ घोरे तावा एताः पंच व्याहृतया भवन्ति ।। (ईश्वरीय ज्ञान पृ० १९८)

अर्थात्–उसने इन्हें इन पांचों में देखा-ऋग, यजु, साम, शान्ति प्रधान अथर्व और घोर प्रधान आंगिरस, वेदों में यही तक पांच व्याहृतियों का विस्तार है ।

इत्यादि प्रकार से एक ही अथर्व वेद के दो रूपों का वर्णन दो विद्याओं के तौर पर किया है इस बात चार ही वेदों के ऋग, यजु, साम, अथर्व और आंगिरस

इन्हें कहीं सूक्ष्म, कहीं सुषुम्ण, कहीं प्रणव और कहीं आंगिरस भी कहा है । यथा–

ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथाथर्वणः ।
सूक्ष्म वेदोहि व्याध्यक्षः पंच वेदाः प्रकीर्तिताः ।।
(कपिल गीता अ० २।१०।।)

अर्थ-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद और सूक्ष्म, आंगिरस वेद ये पांच वेद है ।

तथा:–

ऋग्वेदश्च मनोश्चैव यजुर्वेदो मयस्तथा ।
सामवेदस्त्वष्टुर्वेऽथर्वा तु शिल्पिकस्य च ।।
सुषुम्णाभिः भवः वेदो दैवज्ञस्य प्रकीर्तितः ।
पंच वेदांश्च यो वेद सायुज्यं लभते नरः ।।
(शैवागमे अ० ७ । तथा ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड प्रकरण ५१)

अर्थ–ऋग्वेद मनु का यजुर्वेद मय का साम वेद त्वष्टा का अथर्ववेद शिल्पी का और सुषुम्णः(आंगिरस)वेद दैवज्ञ (विश्वज्ञ) का है जो इन पांचों वेदों को जानता है वह सायुज्य को प्राप्त होता है ।

तथा–

सऋचोऽधीते स यजूंष्य धीते स सामान्यधीते ।
सोऽथर्वणमधीते सोऽगि रसमधीते ।।
(बृहद् जावलोपनिषद् ।८ ५ ।)

अर्थ– वह ऋग्वेद को पढता है, वह यजुर्वेद को पढ़ता ।

है, वह सामवेद को पढ़ता है, वह अथर्ववेद को पढ़ता है, और वह आंगिरस वेद को पढ़ता है।

यहां भी ऋग आदि वेदों का वर्णन करते हुए पंचम वेद का नाम आंगिरस ही लिखा है ।। तथा:—

आर्कडेकन एडवर्ड राबर्टस जी स्वरचित "विश्व कर्मा और उसकी संतान" नामक ग्रन्थ के प्रकरण ३ में इस प्रकार लिखते हैं कि:— कल्पित उल्लेखों को छोड़कर हम सबसे बढ़कर उत्तम कोटि के ग्रन्थ अर्थात् स्वयं वेद का प्रमाण इस विषय पर उपस्थित करते हैं:—

> अयोमनुस्तु ऋग्जातं मयादारु यजुस्तथा ।
> ताम्रं त्वष्टुरतः सामशिला शिल्पी त्वथर्वणः ।।
> रौप्यस्वर्णार्कैः प्रणवं पंचब्रह्म विशेषते ।।

अर्थात्— लोह शिल्प के कर्त्ता मनु से ऋग्वेद उत्पन्न हुआ काष्ठ सम्बंधी शिल्प के कर्त्ता मय से यजुर्वेद, ताम्रादि शिल्प के कर्त्ता त्वष्टा से सामवेद, शिला सम्बन्धी शिल्प के कर्त्ता शिल्पी से अथर्ववेद तथा सोने और चांदी आदि शिल्प के कर्त्ता विश्वज्ञ से प्रणव वेद उत्पन्न हुआ।

इत्यादि प्रकार से वेदों के पांच नाम होने का ही पता मिलता है। और साथ ही इनके प्राप्त कर्त्ताओं के—

मनुआदि की उत्पत्ति देखो पीछे प्र० २।

भी पांच ही नाम लिखे हैं। अर्थात्-अग्नि, वायु, आदित्य भृगु और अंगिरा जोकि प्रथम कह आये हैं। किन्तु उपरोक्त प्रमाण से इन पांचों के नाम क्रमशः मनु, मय, त्वष्टा शिल्पी और विश्वज्ञ इत्यादि हैं।

इस प्रकार के उक्त वाक्य प्रमाणों का तो यही भाव विदित होता है कि मनु का ही नाम अग्नि था, मय का वायु, त्वष्टा का आदित्य, शिल्पी का भृगु तथा विश्वज्ञ (दैवज्ञ) का नाम अंगिरा था। इस विषय में निम्न वाक्य भी ध्यान देने योग्य हैं।

यथा:—

(१) मनुरूप हुताशन ।। (विश्व ब्रह्मपुराण। अ० १४।१५)

अर्थात् मनु अग्नि स्वरूप था। इससे मनु को अग्नि और अग्नि को मनु के नाम से भी उच्चारण किया गया है।

(२) मयस्तद्वायु रुपेण ।। (वि० ब्र० पु०। अ० १४।१६)

अर्थात् मय वायु रुप से प्रसिद्ध था। अतः वायु रुप होने से मय का नाम वायु कहा गया है।

(३) एकादश तथा त्वष्टा ।।

(महाभारत आदि पर्व अ० ६५।१६)

अर्थात्—बारह आदित्यों में त्वष्टा को ग्यारहवां

आदित्य लिखा है अतः त्वष्टा का नाम आदित्य भी कहा गया है ।।

(४)भृगुवो न रथम् ।।(ऋग० मंडल १० सू० ३९ मंत्र १४)

रथकाराः भृगवः–सायण भाष्यम् । अर्थात् भृगु रथकार था इससे भृगु का नाम शिल्पी तथा शिल्पी का नाम भृगु भी कहा जाता है ।

(५)दैवज्ञ[विश्वज्ञ]का नाम आंगिरा है । यथाः–

त्वांगिरस वते० । [यजु० ३८।१६]अर्थात् अंगिरा अग्नि के रसवत आभूषण बनाने की विद्या में कुशल हुआ । तथा 'विश्वब्रह्म कुलोत्साह' के संग्रह २ पृष्ठ १२ पंक्ति २०।२१ में लिखा है:–आंगिरसत्व आहे तर अंगिरा ऋषि सुवर्णादि शिल्पाधिपति असणे हें स्पष्ट आहे ।। एवं अंगिरा को विश्वज्ञ [दैवज्ञ] तथा विश्वज्ञ को अंगिरा कहा गया है । इत्यादि प्रकार से मनु आदि के अग्नि आदि नाम भी कहे जाते हैं । इस प्रकार वेदों के पांच नाम और पांच ही ऋषि उनके कर्त्ता माने गये हैं । क्योंकि अथर्व वेद को जिसका नाम ब्रह्म वेद भी है शान्ति साधक और पौष्टि साधक इन दो विद्याओं के भाव से उसे दो भागों में माना है और दो ही ऋषि उसके कर्त्ता हैं । जैसे कि प्रथम भी कहा गया है:–'ब्रह्म व भृग्वंगिरसित' ब्रह्म अर्थात् अथर्व वेद भृगु[शिल्पी]और

अंगिरा(विश्वज्ञ) से उत्पन्न हुआ । क्योंकि विश्वकर्मा परमेश्वर ने आदि में इन ही अग्नि(मनु)आदि ऋषियों की आत्माओं में वेदों का प्रकाश किया था (यह विषय विश्वकर्म वंश भास्कर के भाग दो में विशेष रुप से लिखा गया है)

अतएव वेदों के विषय में पाठक स्वयं ही समझ गये होंगे कि भृगु और अंगिरा का अथर्व वेद है, त्वष्टा (आदित्य)जिसे ब्रह्मा भी कहा गया है का सामवेद है । अत्रि का यजुर्वेद तथा मरीचि का ऋग्वेद जानना । इस प्रकार यह वेदों की सामान्यता पाठक गोत्र प्रणाली के लिये ही समझे जैसा कि अगले अध्याय में प्रत्येक गोत्र के साथ वेद का नाम लिखा मिलेगा ।

प्रश्नः—गोत्र के साथ जिस वेद का नाम लिखा मिलेगा क्या उस गोत्र के सब पुरुष उसी वेद को पढते हैं या किसी अन्य वेद को भी पढ सकते हैं ।

उत्तरः—जिस गोत्र का जो वेद लिखा होता है, उस गोत्र के पुरुष प्रथम उसी वेद को पढते हैं, उसके पश्चात अन्य वेदों को पढ सकते हैं, जैसे कि ऋग्वेद वाले प्रथम ऋग्वेद को ही पढते है उसके पश्चात् अन्य वेदों को पढा करते हैं इसी प्रकार अन्य वेदों के विषय में भी यही क्रम जानना ।।

वेदों की शाखायें

वेदों की ११३१ शाखायें मानी गयी हैं, तात्पर्य यह है कि ऋषियों ने चारों वेदों के मन्त्रों को ११३१ शाखाओं में क्रमबद्ध उद्धृत कर दिया, जिससे कि लोगों को वेदों के पढ़ने में सुगमता हो जावे (शाखाओं का विशेष वर्णन देखो विश्वकर्मा वंश भास्कर अ०६) वर्तमान समय में हमारे दुर्भाग्यवश उक्त शाखायें अप्राप्त ही हैं नहीं २ इतना ही नहीं बल्कि बहुत सी शाखाओं के तो नाम तक भी स्मरण नहीं रहे । अतएव पूर्व पुरुषाओं का तो यह अभिप्राय था कि गोत्र के साथ वेद की जो शाखा कही है, प्रथम उसी को पढ़कर पुनः अन्य शाखाओं को पढ़े । वेदों की जिस २ शाखा को जिस २ ऋषि ने बनाया है वह शाखा उसी ऋषि के नाम से प्रसिद्ध है ।

सूत्र:—

जिस प्रकार वेदों की शाखायें बनाई गयी हैं उसी प्रकार वेदों के सूत्र भी बनाये गये हैं और वह सूत्र ग्रन्थ भी सूत्रकार के नाम से ही उच्चारण किये जाते हैं जैसा कि पाठकों को अगले अध्याय में लिखे अनुसार विदित होगा ।

शासन:—

प्रश्न:—शासन किसे कहते हैं ?

उत्तर:—गोत्र ऋषि की शाखा में उत्पन्न हुए किसी पुरुष के नाम को अथवा उससे अतिरिक्त अल्ल भी होते हैं जो कि निकास आदि के कारण बन जाते हैं । उसको शासन कहते हैं ।

जैसे कि उपमन्यु गोत्र ऋषि की शाखा में कोई उपलव नाम का पुरुष हुआ उसका उपल नामक शासन कहा गया । तथा जिला करनाल में एक "कलात" नाम कस्बा है वहां से जिन धीमान् ब्राह्मणों का निकास हुआ उनका कलातिये शासन कहा गया इत्यादि सर्वत्र जानना ।। इति ।।

अथ अष्टमोऽध्यायः

अब हम इस अध्याय में धीमान् ब्राह्मणों के शासन वा गोत्र शाखाओं के शुद्धाशुद्ध रूप और गोत्रादि की सूचि देते हैं ।

इस सूचिपत्र में हमने धीमान् ब्राह्मणों के प्रचलित शासन वा गोत्र शाखाओं के रूपों को शुद्ध कर तथा शास्त्रों से उनके प्रवरों का निर्धारण कर अकारादि क्रमश: कोष्ठों में इस रीति से उद्धृत किया है कि प्रथम कोष्ठ में प्रचलित शासन वा गोत्र शाखा, दूसरे में

उसका शुद्धरुप, तीसरे में गोत्र ऋषि का नम्बर, तथा चौथे कोष्ठ में शुद्धरुप मिलने का प्रमाण लिखा है इससे पाठकों को गोत्र देखने में सुगमता होगी।

पाठकों को यह भी जानना चाहिये कि कितने ही जन अविद्यादि दोषों के कारण शब्दों को तोड़ फोड कर तथा कुछ अक्षरों का घटा बढ़ा कर बोलते देखे जाते हैं इस कारण शब्दों के शुद्धरुपों में महान अन्तर हो जाता है जैसे कि गांव के कितने ही कुपढ लोग। प्रचार को पचार तथा वकील के मोहर्रिर को उकील का मोहरर कहते प्रायः देखे जाते हैं।

इसी प्रकार कितने ही लोग गोत्र के रुप में कही सन्तान सम्बन्ध बतलाने के हेतु वाल, यान, वान, ये और या आदि अंत में जोड़ दिया करते हैं। शासन वा गोत्र शाखा के इन अन्त के अक्षरों को हमने ब्रेकिट मे रख दिया है। अतः पाठकों को आगे लिखे अकारादि क्रमशः कोष्ठों में अपने शासन वा गोत्र शाखा के गोत्र का नम्बर देख कर(धीमान् ब्राह्मण कुलादर्श)के अ०६ में उसी नम्बर में गोत्र, प्रवर, वेद, शाखा शिखा तथा सूत्र आदि का समस्त विवरण मिलेगा।

श्री पं० गणपति जी शर्मा कौमी मुसाफिर

आप कण्ट्रोल रेलवे आफिस एम० डब्ल्यू० आर० सम्पहेटा डेरा (जि० सहारनपुर) निवासी धीमान जाति के पुराने महारथियों में से एक जाति-भक्त हैं, आपने भी अन्य जाति हितैषी सज्जनों की भांति जाति प्रचार में अपना बहुत समय खर्च किया है, मंगलौर के शास्त्रार्थ में भी आपने ही पुस्तकें एकत्रित की थी और उनमें से यथा योग्य प्रमाण निकालने में भी पूर्ण सहायता दी थी, इतना ही नहीं बल्कि वर्तमान में भी आप जाति का हित चिन्तन करते ही रहते हैं। अतः आप लग्न के जाति भक्त हैं।

सूचि कोष्ठम् ।

आसन शासन (शाखा) अथवा वा अल्ल	आसन (शाखा) आदि का शुद्धरूप	गोत्र नं०	शुद्धरूप मिलने का प्रमाण ।
१ अजीत (पुरिया)	(अजापीत)	जमदग्नि ६	लौगा० कात्या० प्रणी० मू० कां
२ अनिर (या)	अनिलायन	जम० ६	मत्स्य पुराणे भृगु गो० काडे
३ असि	असिमदन	जम द० ६	कात्यायन लौ० प्रणीते ।
४ अदवि	अवि	जमद० ६	प्र० दर्पण निबन्ध कदम्ब के ।
५ अनूर	अनूप	भृगु १	प्रवर दर्प० नि० क० के ।
६ अगुल	उपकुल	अगस्ति २८	लौ० का० ।
७ अउला	अतिथेय	जमद० ६	,, ,,
८ अनल अर्जानल	अजमिढ	कण्व १८	आपस्त
९ अतर-अतरैया	आत्रेय	अत्रि १२	बाधायनोक्त ।
१० अठ	अज	मुद्गल०४१	लौगाक्षि ।
११ अश्वलायन	आश्वलायन	मित्रयु० ३	का० लौ० ।
१२ अम्बोति (या)	अम्भोरुह	विश्वामि० २५	महाभारतेदान धर्मे ।
१३ अमापुरी (या)	अमावस्यायन	मुद्गल १९	का० लौ०
१४ अर्पंया	अक्षितय	कुण्डिन २६	प्र० मजरी नि० क० के ।
१५ अटेरि	अटाटि	दधीच ८	मत्स्य पुराणे

१६ अगर (या)	अग्राव	निध्रुव २५	प्र० दर्पण नि० क० के।
१७ आरीलिया	आरालि	बिश्वा० ३५	भृगले दानधर्मेषु।
१८ आटे-आटि	आर्कि	पराशर ३१	लौगाक्षि प्रणीतम्
१९ आर्येया	आर्षेय	विद ७	मात्स्योक्ता
२० आल	आलव	उपम० ३०	प्रवर मन्जरी नि० क०
२१ आलबाल	आलवाल	मुद्ग० १९	मत्स्यपु०
२२ आवस्कायन	आपिकायन	मित्रयु० ३	मत्स्यपुराणे
२३ आलबिसातिये आलबियासन	अलम्भायन	वसिष्ठ २७	बौधायनोक्तम
२४ इसराइये	बर्णाकहस्त	पराशर ३१	का० लौगाक्षि
२५ इन्दोरि (या)	इन्दुवरी	शौन ४४	लौ० मात्स्योक्ता
२६ इन्द्रान	इन्द्रालि	अत्रि ३३	प्रवर मन्जरी नि० क० के
२७ इन्धन	इन्दुवरी	शौन ४४	लौ० मात्स्योक्ता
२८ इषुन	इषुमत	भारद्वाज १४	बौधायनोक्तम्
२९ इषभुत	इषमत	भारद्वाज १४	प्रवर दर्पण नि० क० के
३० इमलि (या)	इन्द्रालि	अत्रि ३३	कात्या० लौ० प्र० मं० नि० क०
३१ उकोरि (या)	उाकारिशी	महेन्द्र ३२	लौगा० कात्यायनोक्तम
३२ [illegible]	[illegible]	कुशि० ३१	गोत्रप्रवर नि० क० के
[illegible]	[illegible]	[illegible] १४	बौधायनोक्तम
३४ [illegible]	[illegible]	मित्रयु० ३	बौधायनीय
३५ [illegible]	उपलय	अत्रि ३३	मत्स्यपु० प्रवरानुकीर्तने
३६ उजरा	उर्जयिन	भरद्वा० १४	आपस्तम्बोक्त।
३७ उर्नया	उप्पकु	लौगा ४६	लौगा० कात्यानोक्त
३८ उटवारि (या)	उप्फास	जमद० ६	बौधायनीयम् प्रवरे
३९ ऊनसैं (या)	ऊर्णनाभि	भवि० ३४	मत्स्य पुराणे।
४० उपरानिये	उपरायण	दृषद० १०	मत्स्यपुराणे।
४१ ऋक्ष (वाल)	ऋक्ष	ऋक्ष १७	आश्वलायनोक्त
४२ ऋषि (वाल)	ऋषि	जमद० ६	मात्स्योक्त
४३ एंदि	एटिकि	गौतम १२	गोत्र प्र० निबंध कदम्ब के
४४ एकडीवाल) ऐकडी वाल)	एटिकि	गौतम १२	" " " "
४५ एहुरा	एविनि	अगस्ति २८	लौगाक्षि प्रणीत।
४६ एदीजस	एतिशायन	जम० ६	बौधायनीय भृ० गो० कां०।
४७ औडली (वाल)	औडली	निध्रु० २५	बौधायनोक्त।
४८ औथी	औक्थ्य	यास्क २	मत्स्य पुराणे।
४९ कन्दा (रिया)	कण्व	कण्व १८	मत्स्योक्त।

५० कलीन	कलानि	कपि १६	मत्स्योक्तं
५१ कपिलान	कपिल	ऋक्ष १७	बोधायनोक्तं ।
५२ कपड़ (यान)	कपिल	ऋक्ष १७	,, ,,
५३ करोड़ (ये)	क्राडि	गर्ग १५	मत्स्य पु० ।
५४ कलरीन	कलूण	पृषद० १०	मात्स्योक्तं ।
५५ करालि (ये)	करालि	गौतम १२	कात्या० लौगा०
५६ कटयाग	कटायनि	विद ७	प्रवर दर्पण नि० क० के
५७ कबदु (वाल)	कदम	कश्यप २४	मत्स्यपुराण
५८ कहला	काहुल	विश्वामित्र ३५	गोत्रप्रवर नि० क० के
५९ कलसि (ये)	कलसि	कपि १६	मत्स्यपुराणे
६० (कपूर क्षत्री) वात्सल्य	वात्सल्य	करेणु० ११	बोधायन प्रणीते
६१ करभलया	करभाया	कात्या० ४०	बोधायनोक्तम
६२ कठोड़े (बाल)	कठोरि	अगस्त्य ८	बोधायनमहाप्रवरे
६३ कड़ी (बाल)	कारि	गर्ग १६	बोधा० प्रणीते
६४ कल्याण	कालायन	असित २८	बोधायनोक्तम
६५ काहुन	काहुन	विश्वा० ३५	प्र० द० नि० क० पे०
६६ [illegible]	[illegible]	[illegible]	प्र० म० नि० क० के

६८ कालोरि (या)	कालक	उशिज ६	मत्स्यपुराण
६९ कारोनि (या)	कारीषित	वसिष्ठ २७	बोधायनोक्तम्
७० कालकायण	कालकायन	मधु० ४१	आश्वलायन
७१ कारषि	कारीषि	उद्दालक ३६	इतिमात्स्य
७२ काटोरि (या)	काष्ठोदक	भरद्वाज १४	अत्र बोधायन
७३ किवाड़वाल	कैवाल्य	गर्ग १५	प्र० दर्पण नि० कदम्ब के
७४ किरेल	करेल	गौतम १२	मात्स्योक्त ।
७५ कुन्दराल	कुण्डीदरायण	उपमन्यु ३०	बोधायनोक्तं ।
७६ कुन्दी	कुण्डिन	कुण्डिन २६	बोधायन प्रणीते ।
७७ कुन्नर-कुन्नड	कुनाड	महेन्द्र ३२	कात्या० लौगाक्षि प्रणीते ।
७८ कुवार	कैवाल्य	गर्ग १५	बोधायनोक्तं ।
७९ कुडल-कंडव	कुंडव	गौतम १२	का० लौ० ।
८० कुतवारि (या)	कुत्स	कुत्स ४७	पंचाल ब्रा० ब्रो० प्र० दीपिका ।
८१ कुतबालि (या)	कुत्स	कुत्स ४७	,, ,, ,, ,, ,,
८२ कैशरे	केशरदय	भरद्वा० १४	प्रव० दर्प० नि० क० के ।
८३ कंम	कम्बलोदरी	जमद० ६	लौगाक्षि कात्यायनोक्त ।
८४ कंची	कञ्चि	भृगु १	मत्स्य पुराणे
८५ कोटमनि (या)	कोटिल्य	यास्क २	बोधायनोक्तं ।

८६ कौण्डल	कौण्डिन	कुण्डिन २६	आश्वलायनोक्तं ।
८७ कौसल	कौसल्य	महेन्द्र ३२	प्रव० दर्प० नि० क० के ।
८८ खरे	खरथ	निध्रुव २५	बोधायनोक्त
८९ खरदड	खरआस्तांडव	कपि १६	प्रवर मंजरी नि० क० के
९० खरखोदे (वाल)	,, ,,	,,	,, ,, ,, ,,
९१ खरवल	खार्द भायरा	शाण्डि० २५	प्रवर मंजरी कश्यप गो० का० ।
९२ खड	खग	आतु० ४५	गो० प्रवर नि० क० के
९३ खडकमान	खण्डमान	निध्रुव २५	गो० प्रवर नि० क० के
९४ खट्टे	खण्ड	कश्यप २४	का० लौ०
९५ खन्दर (वाल)	खान्दिन	गर्ग १५	का० लौ०
९६ खाण्डे (व.ल)	खाण्डव	मित्रयु० ३	मत्स्यपुराण
९७ खाजपुरि (वा)	खार्दभायन	शुनक ५	बोधायनोक्तम्
९८ खुरर	खारुड	भरद्वाज १४	गो० प्र० नि० क० के
९९ खुरल-खरल	खरण्ड	दक्ष १८	का० लौ०
१०० खुल	खलि	यास्क २	मत्स्यपुराण
१०१ खुरी (वाल)	खांदिन	गर्ग १५	का० लौ०
[illegible]	[illegible]	गर्ग १५	मात्स्योक्तम्
[illegible]	[illegible]	[illegible]	का० लौगाक्षि० प्रणीते
[illegible]	[illegible]	निध्रु० २५	बोधायनोक्तम्
[illegible]	[illegible]	[illegible] १७	गो० प्र० नि० क० के
[illegible]	गाल्वायन	पराशर ३१	आश्वलायनोक्तम्
१०७ गणपत	गणपति	अत्रि ३३	गो० प्र० नि० क० के
१०८ गठो०१	गोष्ठायन	जमदग्नि ६	का० लौ० प्रणीते
१०९ गठौरे	गोष्ठायन	जमदग्नि ६	,,
११० गड्डिरीवा	गाड्डिलीवलि	संकृ० २०	बोधायनप्रणीते
१११ [illegible]	गा[illegible]	अत्रि ३३	बोधायनप्रणीते
११२ गार्गलस	गार्म्य	गर्ग १५	का० लौ० प्रणीते ।
११३ गागले	गलागली	संकृ० २०	मात्स्योक्ता ।
११४ गाडे	गाडलि	उपमन्यु ३०	गो० प्रवर नि० क० के ।
११५ गाडे (मंगलोरी)	गाडलि	उ० ३०	,, ,, ,,
११६ गाडे (वाल)	गादि	कपि १६	मत्स्य पु० पुराणे ।
११७ गाडल	गाधि	गर्ग १५	मत्स्य पु० ।
११८ गाहुके	गाधि	गर्ग १५	,,
११९ गाहुलन	गार्भायन	शुनक ५	बोधायन प्रणीते
१२० गालव	गालव	जमद० ६	मत्स्य पुराणे ।
१२१ गन्धारिये	गान्धर्वरायण	गर्ग ५	बोधायनोक्त

१५६	चाले	चौलि	वसिष्ठ २७	कात्यायनप्रणीते
,,५७	चास	चाष	प्रशस्ति २८	प्र० दर्पण नि० क० के
,,५८	चिलौडि(या)चिल्वोडि(या)	चल्व	उपमन्यु ३०	बौधायनोक्तम्
,,५९	चिरथावलि (या)	चिर	जमद० ६	मत्स्यपुराणे
,,६०	चिटिया चांडक	चण्डाण्डक	उशिज ६	,,
,,६१	(चुहड) काण	काणायन	भृगु १	बौधायनप्रणीते
,,६२	चुर्ड	चूर्णबोध	अत्रि ३३	आपस्तम्बायुक्तम्
,,६३	चुण्डवाले	चूर्णबोध	अत्रि ३३	,,
,,६४	चौहड लानय	चौण्डावरय	वसिष्ठ २७	का० लौगाक्षि
,,६५	चोहय	चौप्यरणाय	लौगाक्षि ४६	प्र० मंजरी नि० क० के
,,६६	चाये	चाम्पेय	विश्वामित्र ३५	भाते दानधर्मे
,,६७	चौजन (पुरिण)	चैतिम	कपि १६	का० लौ०
,,६८	चौबे	चैत्रेय	कुशिक ३६	बौधायनोक्तम्
,६९	चोखा	चोक्ष	शुनक ५	बौधायनोक्त ।
,,७०	चोहले-चोहल	चोल	उपमन्यु ३०	,, ,,
,,७१	चोहरे (वाल) चोहरे	चोवाल	कुशिक ३६	,, ,,
,,७२	[illegible]	चोदायनि	कात्या० ४०	गो० प्रवर नि० क० के।
,,७३	[illegible]	[illegible]	निध्रुव २५	बौधायन प्रणीते।

१७४	[illegible]	छान्दि	अत्रि ३३	,, ,,
,,७५	छूबे	छायवरा	निध्रुव २५	का० लौ० ।
,,७६	जब्बल जबल	जाबाल	उद्दालक ३६	लौगाक्षि प्रणीते।
,,७७	जवोहि	जह्	शालंका० ३८	गोत्रप्रवर नि० क० के।
,,७८	जगदेव जगदेहि) कलातिये)	जमं चि	जमद० ६	मत्स्य पुराण ।
,,७९	जटोल जतोल)	जैस्वलायन	भरद्वा० १४	इतिबौधायनः ।
,,८०	जटबारिया	जैबत्यायन	यास्क २	कात्यायनोक्त ।
,,८१	जति (पुरिया)	जत्रिणि	विष्णु वृ० २२	का० लौ० प्रणीते।
,,८२	जडलोलि (या)	जातुकर्ण्य	वसिष्ठ २७	बौधायनोक्त ।
,,८३	जस्क (लायन)	यस्क	वीत०-यास्क २	प्र० दर्पण नि० क० के।
,,८४	जांड-जांघ	जंघ	मुद्गल १९	गो० प्रवर नि० क० के।
,,८५	जन्दु	जलन्दु	कपि १६	आश्वलायनोक्त ।
,,८६	जासल	जावंश	शांडिल २६	गो० प्रवर नि० क० के० ।
,,८७	जरौलि (या)	जंघारि	विश्वामित्र ३५	बौधायनः ।
,,८८	जासी	जलसिम्बि	कपि १६	मत्स्यपुराणे ।
,,८९	जानऊए	जानुकि	अत्रि ३३	इतिकात्यायनः ।
,,९०	जितुले-जोतले	जतृण	पयद्वव १०	प्र० मंजरी नि० क० के।

२२१ छिलो-थिलो	धर्मालि	भृगु १	प्र० मं० नि० क० के
,,२२ तरा	तरायण	उपमन्यु ३०	मत्स्यपुराणे
,,२३ तनवल	ताजायन	उपमन्यु ३०	गो० प्र० नि० क० के
,,२४ तन्नो	तौयनि	कात्या० ४०१	का० लौ० प्रणीतम्
,,२५ तमन(गड़िया)	तामान्य	वसिष्ठ २१	,, ,,
,,२६ तारको	तारक्य	धनञ्जय ४२	इति मात्स्य
,,२७ तनवा (रिया)	तन्ववाह	अत्रि ३३	का० लौ० प्रणीतम्
,,२८ तापुरि (या)	तपस्वीतितर	कपि १६	मात्स्योक्ता
,,२९ ताभो	तारकाद्य	साङ्कृत्य २०	प्र० मंजरी नि० क० के
,,३० तिलखू	तैल	साङ्कृत्य २०	मत्स्योक्ता
,,३१ तिलक	तैल केवि	वत्स ६	का० लौ०
,,३२ तौरे-तरे	तरि	कपि १६	गो० प्र० नि० क०
,,३३ तुन्तु	तन्तु	कुशिक ३६	आपस्तम्बोक्तमन्
,,३४ तनु (पुरिया)	तनु कर्णा	ऋक्ष १७	बोधायनोक्तम्
,,३५ तेवपाल	तौम्बलि	ऋक्ष १७	गोत्र प्र० नि० क० के
,,३६ [illegible]	[illegible]	उपमन्यु ३०	का० लौ०
,,३७ [illegible]	[illegible]	अत्रि ३३	का० लौ०
,,३८ [illegible]	[illegible]	[illegible]	मत्स्यपुराणे

२३९ [illegible]	[illegible]	उपमन्यु ३०	गो० प्र० नि० क०
,,४० दाऊद (पुरिया)	दारुल	हरित २३	मात्स्योक्ता
,,४१ दोराङ	दोराङ्कि	अत्रि ३३	बोधायनोक्तम्
,,४२ दिलवर (या)	दालभ्य	हरित २३	का० लौ०
,,४३ दीक्षोटि (या)	दीर्घवित	यास्क २	मात्स्योक्ता
,,४४ दयालु	दयालु	जातुकर्ण ४२	प्र० दर्पण नि० क०
,,४५ देसी	दासी	हरित २३	का० लौ०
,,४६ दूध (वाल)	दूढ	ऋक्ष १७	प्र० मंजरी नि० क०
,,४७ देवल(ये)	देवल	कश्यप २४	मत्स्यपुराणे
,,४८ देवराण-देवरया	देवरात	कुशिक ३६	आपस्तम्बोक्तम्
,,४९ देवनी (वाल)	देवन	वसिष्ठ २७	बोधायनोक्तम्
,,५० देवपुण	देवजाति	शाण्डिल २६	का० प्रणीते
,,५१ ढेंढ	द्रोणि	भरद्वाज १४	का० लौ० प्रणीते
,,५२ दोतालिया	देवतायन	वत्स ६	बोधायनोक्तम्
,,५३ दौलत (पुरिया)	दौलि	उपमन्यु ३०	मत्स्योक्तम्
,,५४ द्रोण	द्रोणभाव	अत्रि ३३	बोधायनोक्तम्
,,५५ दौरान	द्रोणायन	मित्रयुव ३	मत्स्यपुराणे
,,५६ धनवारिया	धनवन्तरि	शाण्डिल २६	बोधा०

२५७ घहूल-दहूल	धावुल	हरित २३	मात्स्योक्तम्
,,५८ धनज कुनय	धनंजय	धनंजय ४२	प्र० मं० नि० क०
,,५९ धन्वते	धन्वन्तरी	शाण्डिल २६	बोधा०
,,६० धान्दल	धान्यायन	भरद्वाज १४	,,
,,६१ धौरी	धौरी	,,	,,
,,६२ धूल	धूमलहारिण	धैम्रुव २५	,,
,,६३ धूपड	धौवपि	वसिष्ठ २१	का० प्रणीते
,,६४ धनियर	धन्वन्तरी	शाण्डिल २६	बोध० कश्यप गो० का०
,,६५ धुम्मी (वाल)	धौम्य	निध्रुव २५	बोधायन:
,,६६ नरणि (ये)	नारायण	कात्या० ४०	बोधायन:
,,६७ नकवारया	नाकव्य	वसिष्ठ २७	मात्स्योक्त
,,६८ नन्हेडिया	नडायन	जमद० ६	मत्स्यपुराणे
,,६९ नट्टे	नडायन	जमदग्नि ६	,, ,,
,,७० नागोरि (या)	नैमिष्य	जमद० ६	मात्स्योक्त
,,७१ नानडे	नाडायन	जमद० ६	प्र० दर्पण निबन्ध क० के
,,७२ निवर्ने (या)	निवर्षि	जमद० ६	प्र० मंजरी नि० क० के
,,७३ [illegible] (या)	निकाश्तोर	उचित्र ६	मत्स्यपुराणे
,,७४ [illegible]	[illegible]	[illegible]	लौ० का०

२७५ नेवल (या)	नेता	सत्यरण्य ३७	मात्स्योक्ता ।
,,७६ नेपाल	नौपेय	जमद० ६	बोधायन: ।
,,७७ नोधोरि	नैध्रुव	निध्रुव २५	आश्वलायनोक्त ।
,,७८ नौहल्या	नाहुलि	उपमन्यु ३०	बोधायनोक्त ।
,,७९ पवारिये	पाविवय	पराशर ३१	कात्यायनोक्त ।
,,८० पथरघटा	पाथोद्भवत	अगस्ति २८	,, ,,
,,८१ पतलिहाण	पतंजलि	कपि १६	का० लौ० ।
,,८२ पराति (या)	पराहरि	भरद्वा० १४	बोधायन: ।
,,८३ पवल	पवन	अत्रि ३३	आपस्तंबोक्तं ।
,,८४ पावम	पादकायन	उपमन्यु ३०	प्र० मंजरी नि० क० के ।
,,८५ पडेर (या)	पाडलि	उद्दालक ३६	इतिमात्स्योक्ता ।
,,८६ पाटक	पाठिक	पराशर ३१	प्र० मंजरी नि० क० के
,,८७ पान्थे	पान्थ	अगस्ति २८	प्रवर दर्पण नि० क० के
,,८८ परासर (या)	पराशर	पराशर ३१	आपस्तम्बयुक्तम्
,,८९ पटेर (या)	पटल	अगस्ति २८	प्र० दर्पण नि० क० के
,,९० पलि (या)	पल	जमद० ५	लौ० कात्या०
,,९१ पंडोलि (या)	पंडोध्वत	अग० २८	प्र० द० नि० क०
,,९२ पानसप	पानस्य	नैध्रुव २६	बोधा०

२९३ पापडी (बाल)	पापेदार	कुशिक ३६	का० लौ०
,,९४ पारसोलिया	पाराशय	वसिष्ठ २७	बोधा०
,,९५ पिलाहे (पिल्हाये)	पालोह	कौण्डिन्य २९	प्र० द० नि० क०
,,९६ पिङ्गलि (ये)	पैङ्गल	हरित २३	मत्स्यपु०
,,९७ पुरोज पुरवा	पुराभिनाय	मित्रयुव ३	बोधा०
,,९८ पैंगे	पिङ्ग	हरित २३	मत्स्यपु०
,,९९ पोरसैया	पौरश्रव	वसिष्ठ २७	कात्यायनोक्ता
३०० फला-फलो	फणि	नैध्रुव २५	कात्यायनोक्ता
,,०१ फल (पुरिया)	फलमूल	,,	का० लौ०
,,०२ फरःणि (या)	पौराणि	शाण्डिल २५	,,
,,०३ बरमोनिया	ब्रह्मबलि	वसिष्ठ २७	आपस्तम्बे
,,०४ बघगइयां	बभ्रतरायण	गर्ग १५	का० लौ०
,,०५ बरवालि (या)	वर्कावर्कि	उपमन्यु ३०	आपस्तम्बोक्तम्
,,०६ बागडी (बाल)	बार्गवलि	यास्क २	मत्स्यपु०
,,०७ बादली (बाल)	बादरी	पराशर ३१	लौ० गृ०
,,०८ बादली (बाल) नहटोरिया	,,	,,	,,
[illegible]	बाहाकायनि	उपमन्यु ३०	बोधा०
[illegible]	बाभ्रु	कुशिक ३६	मत्स्यपु०

[illegible]	आलानि	वत्स ६	आपस्तम्बोक्तम्
,,१२ बास्कल	बाष्कल	वेन ४	बोधायनीयम्
,,१३ बन्धे-बेन्य	बैन्य	वेन ४	,,
,,१४ बरछोलिया	बर्ष्णेय	पराशर ३१	बोधायनोक्तम्
,,१५ बदन करोला	बादरायन	विष्णु वृ० २२	का० लौ०
,,१६ बंचावलिया	बंचायन	लोहित ४३	बोधायनोक्तम्
,,१७ बदनसरया	बैदानय	कश्यप २४	का० लौ०
,,१८ ब्राह्मनिया	ब्राह्मणान	प्रगस्ति २८	प्र० दर्पण नि० क०
,,१९ बालातिया	बाल्यांदः	आङ्गिरा	बोधा०
,,२० बागीसब	बाष्कल	वेन ४	प्र० द० नि० क०
,,२१ बिरचि	बिंचि	वसिष्ठ २७	प्र० मं० नि० क०
,,२२ बिष्ठु	बिलवधक	वत्स ६	,,
,,२३ बिरहा	बीराध्वरे	नैध्रुव २५	प्र० दर्पण नि० क० के०
,,२४ बिकलु	बिलभृत	वत्स ६	,, ,, ,,
,,२५ बिरथ	वृक	कश्यप २४	का० लौ०
,,२६ बेवरान	बेदायन	शाण्डिल २६	परवर मं० नि० क०
,,२७ बर्द(या)	बार्हं	जमद० ६	प्र० द० निबन्ध क० के
,,२८ बडोरि(या)	बडालि	अत्रि २८	प्र० मंजरी नि० क० के।

३२९ बहेडी (वाल)	बहदरी	कश्यप २४	प्र० मंजरी कश्यप कांडे
,,३० बाकोरि (या)	बाक्य	उपमन्यु ३०	प्र० मंजरी नि० क० के
,,३१ बिलोरि (या)	बिलमृत	जमदग्नि ६	प्र० दर्पण नि० क० के
,,३२ बुधोलिये	बुधोदय	अगस्ति २८	बोधायनोक्त
,,३३ बिधुखेडी	बिद्	गर्ग १५	मात्स्योक्त
,,३४ बिजोति (या)	बिडादि	मुद्गल १६	प्र० द० नि० क०
,,३५ बौधिये	बौधिः	अङ्गिरा ८	,,
,,३६ बोजन (या)	बीजवपि	गविष्टर ३४	कात्यायनोक्त
,,३७ बीजा (पुरिया)	बैजवापि	गविष्ठिर ३४	का० लौ०
,,३८ बैटी (वाल)	बैरिणि	अगस्ति २८	लौ० का०
,,३९ ब्याग़ा	ब्यारिग़	गविष्ठिर ३४	का० प्र० दर्पण नि० क०
,,४० भवन (पुरिया)	भवनन्द	नैध्रुव २५	मात्स्योक्त
,,४१ भरत (पुरिया)	भारद्वाजिनि	अत्रि २२	बोधायनोक्त
,,४२ भदाव (लिया)	भद्रादि	भरद्वाज १४	अथबोधायनः
,,४३ भदौकारिया	भाष्टकि	कुशिक ३१	प्र० दर्पण नि० क०
,,४४ [illegible]	भलिव	भृगु १	प्र० मंजरी नि० क०
,,४५ [illegible]	[illegible]	मौगाक्षि ४६	प्र० दर्पण नि० क०
,,४६ [illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

३४७ [illegible]	भारद्वै	कुत्स १७	प्र० मंजरी नि० क०
,,४८ भिडे	भलडेय	भरद्वाज १४	प्र० दर्पण नि० क०
,,४९ भदौलिया	भाष्टेय	कुशिक ३६	बोधायनोक्त
,,५० भागोरि (या)	भागहि	उपमन्यु ३०	प्र० मंजरी नि० क० के
,,५१ भारत (वाल)	भारमत	गर्ग १५	मत्स्यपुराणे
,,५२ भुवने	भौवन	नैध्रुव २५	क० लौ०
,,५३ भुण्डे	भरुण्डेय	भरद्वाज १४	प्र० मंजरी
,,५४ भूरि (यान)	भूरि	भरद्वाज १४	बोधायनोक्त
,,५५ भूलयान भीलयान	भीलीभायन	रथीतर २१	प्रवर दर्पण नि० क०
,,५६ भूतावरिया	भूयसाजलसिवि	कपि १९	मात्स्योक्त
,,५७ भोपेवाल)			
,,५८ भोको)	भोजक	वशिष्ठ २७	प्रवर मंजरी नि० क०
,,५९ भोगल	भोगल	गौतम १२	का० लौ०
,,६० भौहि	भोजसि	कपि १६	प्र० मंजरी नि० क०
,,६१ महालोनिया	महाबलव	मित्रयु० ३	बोधायनोक्त
,,६२ मटोला	मर्कटायन	कण्व १८	बोधा० गो० मृ० गो० का०
,,६३ महावरी	माहोदर	हरित २३	बो० केवलाङ्गिरस गो०
,,६४ मलसारिया	मलायनि	वत्स ६	प्र० मन्जरी नि० क०

३६५ मरवाहे	मैत्रवाह्	लोगाक्षि ४६	बोधायनोक्त
,,६६ मलोतरे	मालोहृदि	वशिष्ट २७	मत्स्योक्ता
,,६७ मान	मानग	वत्स ६	,, ,,
,,६८ मांडके	मण्डव्य	नैध्रुव २५	कात्यायनः
,,६९ मालक	मालरुक्ष	अत्रि ३३	बोधायनोक्तं
,,७० मालायन	माल	रौक्ष १७	बो० विश्वामि० का०
,,७१ माहिल	माहुल	कोशि० ३६	प्र० दर्पण नि० क०
,,७२ मिट्ठल	मठ	कपि १६	आपस्तवे
,,७३ महोलिया	महोवेल	ऋक्ष १७	बोधा०
,,७४ मर्णकु	मण्डकारी	हरित २३	बोधाय० उक्त
,,७५ मण्डिकु	,, ,,	,,	,,
,,७६ मच्छर(वाल) मत्सर(वाल)	मत्स्यकाश	भरद्वाज १४	बोधायनोक्ता
,,७७ महरे	महात्रेय	अत्रि ३३	बोधा०
,,७८ मंगलोरी महरे	महात्रेय	अत्रि ३३	,,
,,७९ मठाड़ु मठाड़	मठर	नैध्रुव २५	बो० मत्स्य० गो०
,,८० मलहुवार	मालोहर	भरद्वा० १४	का० लौ०
,,८१ [illegible]	[illegible]	शाण्डिल्य २६	प्र० दर्पण नि० क०

३८२ मन्धड़ मान्धु	मान्धुकर	कारेणुपा० ११	बोधायनो०
,,८३ माकु	माकृ	नैध्रुव २५	का०
,,८४ मन्डे	मन्ड	वत्स ६	लौ० का०
,,८५ मरसनि (या)	मषस	शांडिल २६	बोधायनः
,,८६ माटोलि (या)	मातलि	यास्क २	महाप्रवरे अ० ५
,,८७ मैथुलि (या)	मैथुनमति	भरद्वा० १४	प्र० दर्पण नि० क० के
,,८८ मोरोलि (या)	मौद्गल्य	जमद० ६	,, ,,
,,८९ मुञ्ज	माञ्ज	नैध्रुव २५	का०
,,९० मीनपुरया	मैत्रेय	मित्रयु० ३	प्र० मञ्जरी नि० क०
,,९१ मोठपुरया	मादहायन	गौतम १२	का० लौ०
,,९२ रसूल पुरिया	रोक्षायण	ऋक्ष १७	बोधायनः
,,९३ रहीम (पुरिया)	रोहितायन	वत्स ६	प्र० मञ्जरी नि० क०
,,९४ रसोते (वाल)	रोष्ट्रयायन	मित्रयुव ३	महाप्रवरे अ० ६
,,९५ रवजाल	रवत	महे० ३२	प्र० म० नि० क०
,,९६ रतनपाल	रतिकायन	कश्यप २४	का० लौ०
,,९७ राहत	राहितायन	यास्क २	महाप्र० अ० ६
,,९८ राजोरिया	राजवाही	लौगाक्षि ४६	कात्यायनः
,,९९ राठोरिया	रोष्ट्रयायन	मित्रयुव ३	प्र० मञ्जरी नि० क०

४०० राय (विशोरा)	रायस्य	शरद्वन्त १३	महाप्रवरे क० १
,,०१ रामनगरया	राजायण	मैधुव २५	बोधा०
,,०२ रावट	राजलबाहु	वत्स ६	,,
,,०३ रूपरा	रूपबिन्दु	उशिज ६	मत्स्यपु०
,,०४ रोषाल	रोष्पायन	मित्रयुव ३	प्र० द० नि० क०
,,०५ रोहिया	रौहि	अगस्त २८	बोधायन:
,,०६ रनपुरि (या)	रनत्र	मुद्गल १६	प्र० मन्जरी भरद्वा० का० ।
,,०७ राजपाल	राज	कुश १७	,, ,, ,,
,,०८ रसायत	राथारतव्य	मुद्गल १६	,, ,, ,,
,,०९ रोहित	रोहिताक्ष	अलंका० ३८	प्र० दर्पण नि० क० के
रौरैया	रैवस	यास्क २	प्र० मन्जरी नि० क० के
,,१० लरैया	लावण्यकालबित	गर्ग १५	बोधायन: ।
,,११ लखन (वाल)	लखायन	भरद्वाज १४	बोधायन: ।
,,१२ लहुभारत	लावण्यकालबित	गर्ग १५	,,
,,१३ लवानि (या)	लवेरणि (या)	वत्स ६	लौ०का०
,,१४ लवरनिया	ललायन	भरद्वाज १४	बोधा०
,,१५ लदोनिया	लवन्दलि	गविष्ठिर २४	मात्स्योक्तं
[illegible]	[illegible]	वत्स ६	मत्स्य पु०

४१७ लालम (तनया) लालम (यनया) ललाम		वत्स ६	मात्स्ये त्वनो
,,१८ लालवरन	लावण	भृग० २८	बोधा०
,,१९ लालदे	लाल्वनि	वत्स ६	मत्स्य पु०
,,२० लालहाग्ग	लल्याम	वत्स ६	,,
,,२१ लाहरे (वाल)	लाह्य	कुण्डिन २६	लौ०
,,२२ लोटे	लोष्ठाक्षि	वत्स ६	मत्स्य पु०
,,२३ लेहिटे(वाल)लौहिटे(वाल)	लोहित	लोहित ४३	बोधायन०
,,२४ बमोरि (या)	बाजनि	पराशर ३१	बोधायनो
,,२५ वडोनि (या)	वैडानि	वध्रि ३३	मात्स्योक्तं
,,२६ वन (लिया)	वनर	वसिष्ठ २७	मत्स्य पुराणे ।
,,२७ विसानिये. विसानियन)	विश्वायन	वसिष्ठ २७	प्र०मंजरी वसिष्ठ का० नि०क०के
,,२८ वाळि (या)	वानाल	अत्रि १७	बोधायनोक्त
,,२९ वाता (पुरया)	वातान	महेन्द्र ३२	लौगाक्षि
,,३० बारधि	बारधर	कश्यप २४	का० लौ०
,,३१ विरवा (लिये)	विरव	अङ्गिरा ८	प्र० दर्पण नि० क० के
,,३२ विशालु	विशाल	उद्दालक ३५	आपस्तंबे
,,३३ विष पुरिया	विषगण	ध्रुव २५	का० लौ०
,,३४ विश्वानिया	विश्वायन	मुद्गल १६	बोधायन०

४३५ बोमुरि (या)	बोमुल	विधुर २५	का० लौ०
,,३६ शिबि	शिबि	पराशर ३१	प्र० दर्पण नि० क० के
,,३७ शिरे-शिरोइया	शिरीष	गविष्ठिर ३४	मत्स्यपुराणोक्त
,,३८ शिगराल-शिगाल) शिगालिये)	शृङ्ग	भरद्वा० १४	प्र० दर्पण निबन्ध क० के
,,३९ शुन्ने (वाल)	शुनक	शौनक ५	बोधा० महाप्रवरे
,,४० शोहन	शोनायन	वत्स ६	प्रवर दर्पा० नि० कदम्ब के
,,४१ श्रोते (वाल)	श्रोतायन	सकृति २०	बोधायनोक्त
,,४२ शोकि	शौकि	पराशर ३१	प्र० दर्प० नि० क० के
,,४३ शाव-शोंग	शोङ्ग	शुङ्ग ४४	प्र० मंजरी भरद्वाज गो० का०
,,४४ सग्गु-सग्गो	सगासाक्षिकि	उशिज ६	मत्स्य पुराणे
,,४५ समाधि (ये) सिमुलि (ये)	समूल	गौतम १२	का० लौ०
,,४६ सन्तोरि (ये)	सतोमन्द्रि	पृषदश्व १०	मत्स्य पुराणे।
,,४७ सहदेई	सहबोलि	पराशर ३१	बोधायन०
,,४८ सरदइ (वाल)	सुरावरि	भरद्वा० १४	का० लौ०।
,,४९ सर (डीह)	शरद्वन्त	शरद्वन्तः १३	बोधा०।
,,५० [illegible]	[illegible]	[illegible]	आश्वलायन।

४५१ सम्भुरिया	सम्भुर्सम्भव	सकृति २०	बोधायन०।
,,५२ सलोनि (या)	सलानि	भरद्वा० १४	,,
,,५३ सत्यसनातन	सत्यङ्कायन	विष्णु वृ० २२	,,
,,५४ सनेर	सनय	यास्क २	प्र० मंजरी नि० क० के
,,५५ सहनस	सहबोलि	पराशर ३१	,, ,, ,,
,,५६ सङल	सौढहल	मुद्गल १७	लौगाक्षि।
,,५७ सन्नल	सन्य	वत्स ६	प्र० मंजरी नि० क० के
,,५८ स्यान	स्यमायन	सकृति २०	,, ,,
,,५९ साके	शौकि	पराशर ३१	प्र० दर्पण नि० क० के
,,६० सांसि	सांशि	कपि १६	प्र० मंजरी नि० क० के।
,,६१ साहुर (या)	सहरि	गर्ग १५	मात्स्योक्त।
,,६२ साहपुरि (या)	साहव	रथितर २१	आपस्तम्बः।
,,६३ सारंगपुरी (या)	सारंगरि	लौगाक्षि ४५	बोधायनः।
,,६४ सालपुरि (या)	सालहि	भरद्वा० १४	
,,६५ सरस (या)	सरतु	लौगा० ४५	बोधायनोक्त कश्यप का०।
,,६६ सिरोइ (या)	शिरीष	गविष्ठिर ३४	मत्स्य पुराणोक्त।
,,६७ सिद्ध [पुरिया]	सिद्ध	यास्क २	बोधायनः
,,६८ सिमौलिया	समूल	गौतम १२	का० लौगाक्षि।

४६९ शोभोदि (या)	सौदि	भरद्वा १४	प्र० दर्पण नि० क० के
,,७० सिरि (वरिया)	सिरि	उपमन्यु २०	आश्वला० कात्या० ।
,,७१ सिसोलि (बाल)	सौलि	लौगा० ४६	बौधा०
,,७२ सिन्दुरि (या)	सिन्दु	कुश १७	प्र० मंजरी नि० क० के ।
,,७३ सिकिराधि (या)	सिकिरालायन	उद्दाल० ३६	,, ,, ,,
,,७४ सिहोडे	सौहास्य	निध्रुव २५	,, ,, ,,
,,७५ सिद्दल	साडि	भरद्वा १४	प्र० दर्पण नि० क० के ।
,,७६ सिभट	सुविष्ठि	वत्स ६	बौधायनः ।
,,७७ शिभि	शिवि	पराशर ३१	प्र० दर्पण निबन्ध क० के
,,७८ सिन्धु	सिन्धु	भरद्वा० १४	कात्या०
,,७९ सुखी	सासुखी	लौग० ४६	बौधाय: ।
,,८० सुपारि (या)	सुपार्षि	वशिष्ठ २७	मत्स्य-आपस्त०
,,८१ सुलतान (पुरिया)	शुलाबिदु	निध्रुव २५	प्र० मन्जरी नि० क० के
,,८२ सुरसनि (या)	सुरभिलय	मित्रयुव ३	प्र० दर्पण नि० क० के
,,८३ सौढि	सौढि	भरद्वाज १४	,, ,,
,,८४ सौम (बाल)	सिद्ध	यास्क ३	बौधायन:
,,८५ सौढी (बाल) सैढी (बाल)	सौढि	भरद्वा० १४	प्र० दर्पण नि० क० के
,,८६ [illegible]	[illegible]	[illegible]	का० सौ०

४८७ सैरनखिया	सैरन्ध्री	लौगा० ४६	का० लौ०
,,८८ सोम (पुरिया)	सोलहि	भरद्वाज १४	कात्या०
,,८९ सोट	सैन्धव	निध्रुव २५	प्र० मन्जरी नि० क० के
,,९० सोहन (पाल)	सानकायन	वत्स ६	,, ,,
,,९१ सोपानि (या)	सोपानछराल	अत्रि ३३	आश्वलायनादि सर्वस्व
,,९२ सोहस	साहुल	कौशिक ३६	प्र० दर्पण नि० क० के
,,९३ सोपुरि (या)	सोपुरि	गौतम १२	,, ,,
,,९४ सोने (बाल)	सोनय	निध्रुव २५	बोधायनः
,,९५ सौगन (या)	सौगन्धि	वत्स ६	मात्स्योक्तम्
,,९६ सोलि (या)	सौलि	लौगा० ४६	बौधायनः
,,९७ सौमथ्या	शौविरि	कात्या० ४०	मात्स्योक्ता
,,९८ सौरासि (वे)	सौभरायण	धनञ्जि २८	प्र० दर्पण नि० क० के
,,९९ हरकारि (या)	हरकि	वसिष्ठ २७	बौधायन०
,,०० हरखारि (या)	हरकाक्षि	भरद्वा० १४	,,
,,०१ हटबालि (या) हरितबालि [या] हरित		हरित २३	,,

५०२ हल्दौरी	हालोहर	भरद्वा० १४	बोधायन
,,०३ हरपाल	हरपाय	उद्दालक २६	प्र० मन्जरी नि० क० के
,,०४ हिन्दु	हिरण्य	मुद्गल १६	,, ,,
,,०५ हिन्नोटिया	हिरण्य	गविष्ठिर ३४	मात्स्पोक्ता
,,०६ हिण्डनि [बा]	हिरण्य	मुद्गल १६	का० नी०
,,०७ हुण्डन	हुवयन	वत्स ६	मत्स्यपुराणे
,,०८ हौडलि [बा]	हौदमुनि	निधुव २५	बोधा०
,,०९ होते [बाल]	होता	,,	प्र० द० नि० क० के
,,१० रैबरैया	रैबस	यास्क २	प्र० मन्जरी नि० क० के

अथ नवमोऽध्यायः ॥९॥

अथोऽत्र श्रीमता ब्राह्मणानां गोत्रादिकं वक्ष्यामः ।

अब हम इस अध्याय में श्रीमान् ब्राह्मणों के [शासन] गोत्र, प्रवर, वेद, शाखा, शिखा और सूत्र आदि का शास्त्रानुसार वर्णन करते हैं ।

यथा।—

भृगु गोत्र ॥१॥

शासनः—अनूत, कैची, चुहडकाण, ढिलो-चिलो, भले, भलेश्वर, निमाणिये ६ श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन [गोत्र शाखा] वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र भृगु है । प्रवर ५ भार्गव, च्यावन, आप्रवान, अष्ठिषेण अनूपावेद—अथर्व । शाखा—शौनकायनी । शिखा—दक्षिण तथा सूत्र कौषिक है ॥१॥

वीतहव्य (यास्क) गोत्र ॥२॥

शासनः—ओथी, खुल, चड्डे, जटवारिया, जस्कलायन,, रेवरैया, जस्कलायन पीपलीवाल, जस्कलायन सीकरीवाल, जेवरवाल, जेवरीवाल, जैवराम, जैविडावाल, दीघोटिया, बागडीवाल, राहुत, समसपुरिया, सनेर, सीधवान, माटोलिया, सिदपुरिया ।२०।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन [गोत्र शाखा] वा

अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-यास्क । प्रवर ३ भार्गव वीतहव्य, सावेदस । वेद-अथर्व । शाखा-शौनकायनी । शिखा दक्षिण । तथा सूत्र-कौशिक है ।२।

मित्रयुव गोत्र ॥३॥

शासनः-अश्लायन, आयस्कायन, उछाहण, खाडेवाल, झा-झाबा ओझा, दौरान, पुरोजपुरिया, महालोनिया, मीरपुरिया, रसोतिवाल, राठोरिया, रोपाल, सुरसनिया ॥१३॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन [गोत्र शाखा] वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-मित्रयुव । प्रवर ३-भार्गव,वाध्रश्व,दैवोदास ।वेद-अथर्व।शाखा-शौनकायन शिखा-दक्षिण । तथा सूत्र कौशिक है ॥३॥

वैन्य गोत्र ॥३॥

शासनः-वारकल, वन्ये वैन्य वाशीसल ॥३॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन [गोत्रशाखा] वा अल्ल आदि के रूपो का गोत्र वैन्य । प्रवर ३ भार्गव वैन्य, पार्थ । वेद अथर्व । शाखा-शौनकायनी । शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ॥४॥

शौनक गोत्र ॥५॥

शासनः—राजपुरिया, माहलम, याबा, टीटवाल, मुन्नेवाल ५

धीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपो का गोत्र-शौनक । प्रवर ३ भार्गव, शौनहोत्र, गार्त्समद । वेद अथर्व । शाखा-शौनकायनी । शिखा दक्षिण तथा सूत्र-कौशिक है ।

जमदग्नि (वत्स) गोत्र ॥६॥

शासनः—अजीतपुरिया, अजिरवा, अलि, अदखी, अतिलस, उटवारिया, ऋषिवाल, एहीअल, [illegible] हने, कैम, गठोला, गठोरे, गालव, गोलवान, चले-चले-चाले, चव्हाण-चंवान-चौहान, चिरवावलिया, जगदेव (कलालीये) जजदेव-पजदेहि, जैवना, झहिन-झहिन, तिलक, दौनालिया, नखेड़िया नट्ट, नानदे, नैपाल, नामोरिया निवगया, पलिया, बरैया, बिलोरिया, वागले, विच्छु, बिलख, मलमारिया, मान, मडे, रहीमारिया, राजड, लवानिया, रुयाल-रुयान, लालमतनिया, वालडे, वाञ्छायरा, लोटे, सोहन, सन्नल, सिमट, सोहनपाल, सँभारिया, हुल्लन, नामारिया, निवसैया, वरैया, मोरालिया, ॥५२॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र–जमदग्नि । प्रवर ५-भार्गव, च्यवन, आप्नवान, और्व, जमदग्न्य । वेद–अथर्व । शाखा–शौनकायनी । शिखा–दक्षिण तथा सूत्र– कौशिक है ।।६।।

विद् गोत्र ॥७॥

शासन:—आसैवा, अटियारिण ।२।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का:-गोत्र-विद । प्रवर ५-भार्गव, च्यावन, आप्नवान, और्व, वैद । वेद अथर्व । शाखा-शौनकायनी । शिखा-दक्षिण । तथा सूत्र-कौशिक है ।।७॥

अग्डिरा (अयास्य) गोत्र ॥८॥

शासन:—फटोडेवाल, टोटेवाल-तोडेवाल ।२।

श्रीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गौत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र अयास्य । प्रवर ३-आंगिरस, आयास्य गौतम । वेद अथर्व । शाखा-शौनकायनी शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ।।८॥

उशिज गोत्र ॥९॥

शासन:—कासोटिया, चिड़ी खाण्डक, निटोरिया, कपरी, सग्गु-सग्गो, अटेरिया ।६।

श्रीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-उशिज । प्रवर ३-आंगिरस, बाचोति, औशिज । वेद-अथर्व । शाखा-शौनकायनी, शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ।।९॥

पृषदश्व गोत्र ॥१०॥

शासन:—कारीन, जुतले, बोतले उनराणिये, सन्तोरिये ।४।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-पृषदश्व । प्रवर ३-आंगिरस, वैरूप, पार्षदश्व । वेद अथर्व शाखा-शौनकायनी । शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ।।१०॥

कारेणुपाल गोत्र ॥११॥

शासन:—वाल्लभ्य, मान्धु ।२।

श्रीमान् ब्राह्मण के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-कारेणुपाल । प्रवर ३-आंगिरस, गौतम, कारेणुपाल । वेद-अथर्व । शाखा-शौनकायनी । शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ।।११॥

गौतम गोत्र ॥१२॥

शासन:—मोडपुरिया, करालिये, करेल, एंदी टेटी-टेडी कौपुरिया, भोगल, समालिये, एकडीवाल,-एकड़ीवाल कुंडल-कडल, निमोलिया, विरधाखिये, वालोनिया, बीविये ।१४।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-गौतम । प्रवर ३-आंगिरस, औतथ्य, गौतम वेद-अथर्व । शाखा शौनकायनी । शिखा-दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ।।१३॥

शरद्वन्तः गोत्र ॥१३॥

शासन:—गुणादेव मणदेव, रायसिंगेश, मरर्रैया ३।

श्रीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाला) का प्रहन आदि का गोत्र-शरद्वन्त। प्रवर ३-आंगिरस, गौतम, शारद्वन्तः। वेद-अथर्व। शाखा शौनकायनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ॥१३॥

भरद्वाज गोत्र ॥१४॥

शासन:—इयन, इयभुत, केथरे, उजला, ऋषि, गुटर, परानि-या, भीले-जीते ढूंढे, धान्धल, धीरो काटोरिया, निवाखिया, मैथुनिया, सीसोदिया, भूरयान, मन्हरवाल, छीडे, मेही गिरसै-या, भदावलया, बंजल, सिगरान-सिगानिये, ससरानिया, गजार पुरिया, जोनवाल-ओलवान, गोवाछल, सालपुरिया, मोलपुरिया सलोनिया, सरांईवाल, अटोल-अतोल, हरिद्वारिया, शिनिल, महहवार भिडे, हलदोरया, भुन्डे, लखनपाल ॥३६॥

श्रीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाला) वा प्रहल आदि के रूपों का गोत्र भरद्वाज। प्रवर ३ आंगिरस, बार्हस्पत्य, भारद्वाज। वेद अथर्व। शाखा शौनकायनी। शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ॥१४॥

गर्ग गोत्र ॥१५॥

शासन:—केदिये, बचगइया, कडीवाल, केवाईवाल, खंदरवाल गंगल, गाडल, गाहडे, डिडोरिया, बिचुखेडी, भारतवाल,

मथाणिये, लदैया, साहरवा, लुन्नावाल, खेडीवाल, कुवार, गंदे, लहुआरत ।१६।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा प्रल्ल आदि का गोत्र गर्ग। प्रवर ५ आंगरिस, बार्हस्पत्य, भरद्वाज, गार्ग्य, शैन्य वेद अथर्व। शाखा शौनकायनि। शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ॥१५॥

कपि गोत्र ॥१६॥

शासन:—कलौन, कलसिये, गाडवान, भरडेवाल, भरडूवाल, कुक-ड़ेवाल हलवौरिया, टांडावाल, खरखादेवाल, टंडेरिया, डंडारिया तन्डारिया, डडवाल, पतलिहारा, तापुरिया, भुसावरिया, चेतन-पुरिया, जम्बू, खरदड, तीरे तरे, भाही, मिठुल, मांसी, जासा। २१

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा प्रहल आदि के रूपों का गोत्र कपि। प्रवर ३ आंगरिस, आमहय्य, औरुक्षय। वेद अथर्व। शाखा शौनकायनि। शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ॥१६॥

ऋक्ष गोत्र ॥१७॥

शासन:—ऋक्षवाल, कपिलान, कपडवान, लोइया, डाडवाल, घातवाल, तनुपुरया, तेजपाल, बुधवाल, भांगडे मालवान, महोलियां रसूलपुरिया, वाछलय, सडल, सिंदूरिया, राजपाल ।१६।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा प्रल्ल आदि का गोत्र ऋक्ष प्रवर ५ आंगिरस, बार्हस्पत्य, भारद्वाज

वान्दन, मातवचस । वेद अथर्व, शाखा शौनकायनी, शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ॥१७॥

कण्व गोत्र ॥१८॥

शासनः—अजमल अजमील, खुरल-खरल, चतःड़े, मटोला घुणदु ।५।

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र काण्व । प्रवर ३—आंगिरस, आजमीढ काण्व । वेद अथर्व । शाखा शौनकायनि । शिखा दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ॥१८॥

मुद्गल गोत्र ॥१९॥

शासनः—अमापुरगो, पालवाल, जाड़ जाच, विडोलिया, विदवानिया, हिन्दु, हिन्डोनिया, रनपुरिया, रवावत ९ ।

धीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र मुद्गल । प्रवर—३ आंगरिस, भाम्यश्व, मौद्गलय । वेद-अथर्व । शाखा-शौनकायनि । शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-कौशक है ।१९।

संकृति गोत्र ॥२०॥

शासनः—नांगिरांला, गागले, गांगिलस, ताणी, तिलम, धोलेवाल, सम्भुरया, स्पान ।८।

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-संकृति, प्रवर ३—आंगिरस, सांकृति गौरवात । वेद-अथर्व, शाखा-शौनकायनि । शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-कौशिक है ।२०।

रथीतर गोत्र ॥२१॥

शासनः—भूलयान भोलवान, साहपुरिया ।२।

धीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र रथीतर । प्रवर ३—आंगिरस, वैरूप राथीतर । वेद-अथर्व । शाखा-शौनकायनि । शिखा-दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ॥२१।

विष्णुवृद्धा गोत्र ॥२२॥

शासनः—सत्यसनातन, वदनजरीला, अतिपुरिया ।३।

धीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र—विष्णु वृद्धा । प्रवर ३—आंगिरस, पौरुकुत्स त्रासदस्यव । वेद-अथर्व । शाखा शौनकायनि । शि०—दक्षिण । तथा सूत्र—कौशिक है ॥२२॥

हरित गोत्र ॥२३॥

शासनः—डफल दफल दभल, दाऊदपुरिया, चिलबरिया, बडूल दडूल, पिनलिये, पैङ्गे, भमरा, महादरी, मनकु-मण्डिकु, हटवाल हरितवाल, देवी ।११।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र हारित । प्रवर ३–आंगिरस, आम्बरीष, यौवनाश्व । वेद-अथर्व । शाखा–शौनकायनि । शिखा-दक्षिण तथा सूत्र–कोशिक है ।।२३०

कश्यप गोत्र ।।२४।।

शासन:-कट्वाल,, जट्टे, देवलये, बदनसरिया, विरख, रतनपाल, बौरथी, । बहेडीवाल । पीपलीवाल (पिपलादि)

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र–काश्यप । प्रवर ३- काश्यप, आशीत, दैवल । वेद–ऋग० । शाखा-आश्वलायनि । शिखा-दक्षिण तथा सूत्र–आश्वलायन है ।।२४।।

(नैध्रुव) गोत्र ।।२५।।

शासन:—ओडलीवाल, कात्यायन, खरे, खंड, गौरपुरिया, छीवरे–छिवर, धुलये, नोधीरये, पानस्य, फरण-फरो, फलपुरया, निरड़ा, भवनपुरया, भुवने, मादडे, मठाडू–मठाडू, मांकु, मुंगे, रामनगरया,, विषपुरया, बोमुरया, सिहोडे, सुलतानपुरया, बगरया हूर, घुम्मावाल, सोंद, सोगेवाल. हौडलया, होतेवाल ।।३०।।

श्रीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-निध्रुव । प्रवर ३—काश्यप, आवत्सार, नैध्रुव । वेद–ऋग० शाखा–आश्वलायनी । शिखा-दक्षिण तथा सूत्र–आश्वलायन है ।

शाण्डिल्य गोत्र ।।२६।।

शासन: –खरदल, गिलगिलडे–गिलहडे, गुडेले, चलोवे, गोभिलियान, वासल, डफकू, देवगुण, धनवारिया, धन्वन्ते, फरानिया, बेदवान, मंगलोरिया, घनियर, बडेहीवाल, गुवरया, मरसनिया ।।१७।।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र–शाण्डिल । प्रवर ३-काश्यप, आवत्सार, शाण्डिल्य वेद ऋग । शाखा आश्वलायनी । शिखा दक्षिण तथा सूत्र आश्वलायन है ।२६।।

वसिष्ठ गोत्र ।।२७।।

शासन: – करोमिया, गैली, गैविलियान, चाले, चौहड़खानम जडलोलिया, नमनगढ़िया, धुली, देवनीवाल, धूपड़, नकवारिया, पारसोलिया, वरमोनिया, विरदि, भोकी, भलोतरे, सुपारिया, हरकारिया, धानविसातिये, बिसातिये, वनलिया, पोरसैया, भोपेवाल ।।२१।।

श्रीमान ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र वसिष्ठ । प्रवर १—वासिष्ठ । वेद–ऋग । शाखा आश्वलायनी । शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-आश्वलायन है ।।२७।

अगस्ति गोत्र ।।२८।।

शासन:—अपुल, कल्याण, चास, रोहिया, एडुण, टट्टूर-तत्तर पथरचटा, ब्राह्मणिय, वैरीवाल, सालयरण, सोरागिये, वावन, पान्थे, पटेरिया, पण्डोलिया, बुधोलिये ।।२६।।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-अगस्ति। प्रवर ३-आगस्त्य, दार्ढच्युत, एध्मवाहा। वेद-ऋग। शाखा-आश्वलायनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-आश्वलायन है ॥२८॥

कुण्डिन गोत्र ॥२९॥

शासन-कुन्दी, कौण्डिन, गुगल, गुगले, पिलाहे-पिल्हाये, बांगोवाले, लोहरेवाल, अमैया ॥८॥

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र कुण्डिन। प्रवर ३-वासिष्ठ, मैत्रावरुण, कौण्डिन्य। वेद-ऋग शाखा-आश्वलायनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-आश्वलायन है ॥२९॥

उपमन्यु गौत्र ॥३०॥

शासन-उपल कुन्दराल, गाडे, गाडे, गोत्र मञ्जूरीरी, गिहीर-गिहीर गुलसारिया, गुलसय्या-गुल, जांदीवाल, चित्ताड़िया-चित्तोड़िया, चोहले - चोहल, तरा, तनवाल, तेवण - तेवेश्व दलाल, दौलतपुरिया, नौहय्या, पावन, बरवालिया, बजुाड़े, खिरिवरिया, मागोरिया, वाकोरिया, आल ॥२३॥

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-उपमयु। प्रवर ३-वासिष्ठ, ऐन्द्रप्रमद, आभरद्वस। वेद-ऋग। शाखा-आश्वलायनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-आश्वलायन है ॥३०॥

पराशर गोत्र ॥३१॥

शासनः—धाडे आदि, इमरारया, खोड़या, जोसि, ढोंगडे-रोगडे, पवाशिये, पाटक, बादलीवाल, बादलीवाल नहरोलिया बरसोलिया, वकोरिया, सिमि, शोकि, सहदेई, सहनवाल, साके, सिमि, परसरयर ॥१८॥

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपोंकागोत्र-पराशर। प्रवर ३-वासिष्ठ, शाक्त्य, पाराशर। वेद-ऋग शाखा- आश्वलायनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-आश्वलायन है ॥३१॥

महेन्द्र गोत्र ॥३२॥

शासन-उकोरिया, कल्लर-कलाड, कोसल, गन्धु, रवजान, बालापुरिया ॥६॥

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-महेन्द्र। प्रवर ३-आगस्त्य, माहेन्द्र, मायोभुव। वेद-ऋग। शाखा-आश्वलायनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-आश्वलायन है ॥३२॥

अत्रि गोत्र ॥३३॥

शासन— अतर-अतरैया, इन्दराग, गणपत, गाले, गुणिवारिये, गोहीर, गोलेवाल, चञ्जिरावलिया, चूड़े, चूल्हखाने, छोन्दरे, जानराए, टल्ले-टल्ले, टीडेवाल, तनवारिया, तल्ले-तोल्ले

दांराड, द्रोण, पवन, भरतपुरिया, मालक, महरे, महरे मञ्जुलोरी, बडौलिया, सौपानिया, बडोरिया, इमलिया ॥२७॥

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन, (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-अत्रि। प्रवरे ३-आत्रेय, आर्चनानस, श्यावाश्व। वेद ऋग। शाखा-आश्वलायनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र आश्वलायन है।

गविष्ठिर गोत्र ॥३४॥

शासन-ऊनसैया, खैरारिया, श्रीअनिया, थोजोपुरिया, लवोइया, शिरे-शिरोइया, छिन्नाटिया, शिरोहिया ॥८॥

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-गविष्ठिर। प्रवर ३-आत्रेय, आर्चनानस, गोविष्ठिर। वेद ऋग। शाखा-आश्वलायनी। शिखा दक्षिण तथा सूत्र आश्वलायन है ।३४।

विश्वामित्र गोत्र ॥३५॥

शासन:—अरबेतिया, अरोलिया, बाबे, टांडेवाल, शावन, जरीलिया, काहलून, कहलो ॥८॥

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-विश्वामित्र। प्रवर ३-वैश्वामित्र, कायक, कायक। वेद-यजु। शाखा माध्यन्दनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-कात्यायन है ॥३५॥

उद्दालक गोत्र ॥३६॥

शासन:—देवराख, उबल, इरपाल, कारशि, मोथ जम्बल-अबल, बीबे, बोहरेवाल, डहुल, बसल, मुन्नु, पापड़ीवाल, भटोकरिया, भडौलिया, बिशानु, शिकरोदिया, पडीरिया ॥१६॥

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र उद्दालक। प्रवर ३ वैश्वामित्र, देवरात, उद्दालक, वेद-यजु। शाखा-माध्यान्दनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र कात्यायन है ॥३६॥

अश्मरथ्य गोत्र ॥३७॥

शासन:—नैलनवा, भट्टेवाड़े भट्टाआड़े भट्टधोंड़े चौटरे ।२।

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र अश्मरथ्य। प्रवर ३-वैश्वामित्र, आश्मरथ्य, वाधूल। वेद-यजु०। शाखा-माध्यान्दनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र कात्यायन है ॥३७॥

शालंकायन गोत्र ॥३८॥

शासन:—अजोहे, रोझित ॥२॥

श्रीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-शालंकायन। प्रवर ३-वैश्वामित्र, शालंकायन, कौशिक। वेद-यजु०। शाखा-माध्यन्दनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र कात्यायन है ॥३८॥

कौशिक गोत्र ॥३९॥

शासनः—माहिया, माहुल ॥२॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-कौशिक। प्रवर ३-वैश्वामित्र, काहुल, माहुल, वेद-यजु०। शाखा-माध्यन्दिनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-कात्यायन है ॥३९॥

कत्यायन गोत्र ॥४०॥

शासनः—इन्दौरिया, इन्वन, करचलिया, धौदहराश, लर्भा, नरालिये, सौसैया ॥७।

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र कात्यायन। प्रवर ३-वैश्वामित्र, कात्य, आत्कील वेद यजु०। शाखा-माध्यन्दनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र कात्यायन है ॥४०॥

मधुच्छन्दस गोत्र ॥४१॥

शासनः—थड, कालकापन ॥२॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल (निवासस्थान) आदि के रूपों का गोत्र-मधुच्छन्दस। प्रवर ३-वैश्वामित्र माधुच्छन्दस, धाज्य। वेद-यजु०। शाखा-माध्यन्दिनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-कात्यायन है ॥४१॥

धनञ्ज गोत्र ॥४२॥

शासन—धनजखुनय, दारकी ॥२॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (गोत्रशाखा) वा अल्ल आदि के रूपों का गोत्र-धनञ्जय। प्रवर ३-वैश्वमित्र, माधुच्छन्दस धानञ्जय। वेद-यजु। शाखा-माध्यन्दनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-कात्यायन है ॥४२॥

लोहित गोत्र ॥४३॥

शासन—बधनावनिया, लौहिडेवान,—लौहिडेवान ॥२॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (वा अल्ल) आदि के रूपों का गोत्र-लौहित। प्रवर ३-वैश्वामित्र, अष्टक, लौहित। वेद-यजु। शाखा- माध्यन्दनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-कात्यायन है ॥४३॥

शौंगा गोत्र ॥४४॥

शासन—शौंग, शौङ्ग ॥२॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (वा अल्ल) आदि के रूपों का गोत्र-शौङ्ग। प्रवर ५-आङ्गिरस, बार्हस्पत्य, भारद्वाज, शौङ्ग-शैशिर। वेद-अथर्व। शाखा-शौनकीय। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-कौशिक है। ४४।

द्विगोत्रियः—जातुकर्ण्य गोत्र ॥४५॥

शासन—खड, खालु ॥२॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन वा शाखा वा अल्ल (निवासस्थान) आदि के रूपों का गोत्र-जातुकर्ण्य। प्रवर ३ वासिष्ठ, आत्रेय, जातुकर्ण्य। वेद-साम। शाखा-कौथुमी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र-पारस्कार है ॥४५॥

द्विगोत्रिय:-लौगाक्षि गोत्र ॥४६॥

शासन—उर्कैया, पोहुप, भटि, मरवाहे, राजोरिया, मारडू पुरिया, मरसैया, सिशोलिवाल, मुकी, मेवपुरिया, मेरवाडिया, सोहिलया, ॥१२॥ सांकरीवाल (सैंकि)

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (शाखा) वा अल्ल (निवासस्थान) आदि के रूपों का गोत्र-कुत्स। प्रवर ३। काश्यप, आव-त्सार, वासिष्ठ। वेद साम। शाखा कौथुमी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र पारस्कर है ॥४६॥

कुत्स गोत्र ॥४७॥

शासन—कुतवालिये, कुतवालिया, कालाक्षिये, कौत्साये ॥४॥

धीमान् ब्राह्मणों के इन शासन (शाखा) वा अल्ल (निवासस्थान) आदि के रूपों का गोत्र कुत्स। प्रवर ३। आङ्गिरस, मांधात्र, कौत्स। वेद-अथर्व। शाखा शौनकायनी। शिखा-दक्षिण तथा सूत्र कौशिक है ॥४७॥

इस प्रकार शिल्पी (धीमान्) ब्राह्मणों के यद्यु ऋग, यजु, तथा साम आदि सब वेद साधारणता से हैं और इनका मुख्य वेद अथर्व वेद ही है जैसा कि पीछे प्र० ७ में कहा गया है इत्यादि संक्षेप से जानना।

शुभ सूचना

जिस किसी सज्जन के शासन (प्रचलित) गोत्रशाखा आदि इन ४७ गोत्रों के ५१२ रूपों में दर्ज न हों तो वह अपने शासन

प्रचलित गोत्र शाखा आदि का ज्यों का त्यों नाम लिखकर ग्रन्थ-कर्ता के पास नीचे लिखे पते पर भेज दें तो हम उसे भी शास्त्रों में शुद्ध करके वह जिसको गोत्रशासन होगा उसी के साथ संमिलित कर देंगे। शासन भेजने का पता:—

पं० उदयराम शर्मा सिद्धान्तरत्न

मांगल पो० खास जिला बिजनौर।

अथ दशमोऽध्यायः ॥१०॥

। अथ विवाह सम्बन्ध ।

प्रश्न—यह तो विदित हो गया कि आदि में चार ही ऋषि गोत्रकार हुए। फिर उन चार के दश हुए तथा फिर उन दश के शाखा प्रशाखाओं के भेद से अनेक गोत्र हो गये परन्तु हमें यह समझाइये कि जब उन चार ही ऋषियों से चले हुए अनेक गोत्र हुए हैं तो उनमें परस्पर विवाह सम्बन्ध होने का विधान किस प्रकार से है।

उत्तर—इस विषय में हम आप को विश्वकर्मा पुत्र ब्रह्मा के अर्थवती सृष्टि में उत्पन्न हुये अङ्गिरा नामक पुत्र का ही उदाहरण देकर सर्वथा अर्वाचीन गोत्रकार

ऋषियों का दिग्दर्शन कराते है। देखा पहले अङ्गिरा के वंश में कालान्तर में गौतम भरद्वाज यह दो गोत्रकार ऋषि उत्पन्न हुए, अतः इस वंश के तीन भेद हो गये। जिन पुरुषों का साक्षात् केवल अङ्गिरा से सम्बन्ध रहा उनको केवलांगिरस कहते हैं। जिनका गौतम से सम्बन्ध रहा उनको गौतमांगिरस कहते हैं तथा जिनका भारद्वाज से सम्बन्ध रहा उनको भरद्वाजांगिरस कहते हैं। इन तीनों गोत्र वालों का आपस में विवाह सम्बन्ध होता है।

बृहदारण्यक उपनिषद् के प्रमाण से हम पीछे अ० ६ में बतला आये हैं कि जीव के तीनों प्रकार के अर्थात् स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण शरीरों के सम्बन्ध को सर्वथा विदग्ध करने वाले आत्मदर्शी मन्त्र दृष्टा पुरुष ही गोत्रकार ऋषि होते हैं।

ऐसे आत्मनिष्ठ पुरुषों के विषय में ही उपनिषद् में इस प्रकार कहा गया है कि:—

अत्री पिताऽपिता भवति, माताऽमाता ॥१॥

(बृहदारण्यक उपनिषद् अ० ४। ब्रा० ३। २२)

अर्थात्—इस दशा में (ब्रह्म ज्ञानावस्था में सुषुप्ति की तरह कुछ भी भेद भावना नहीं रहती) पिता पिता

नहीं रहता, तथा माता माता नहीं रहती। इस प्रमाण से यह स्पष्ट है कि ब्रह्मज्ञानी के सब सम्बन्ध ज्ञानाग्नि में भस्मीभूत हो जाते हैं। जैसे भुने हुवे चने का सम्बन्ध चने के पेड़ से नहीं रहता। इस ही प्रकार आत्मदर्शी पुरुष का सम्बन्ध माता पिता आदि सब सम्बन्धों से टूट जाता है। ऐसे आत्मज्ञानी पुरुषों को अनेक जन्मों में अभ्यास किये हुए वेदादि शास्त्रों की स्मृति स्वयं बाल्यावस्था से ही होने लगती है और क्रमशः वृद्धि करती हुई पूर्णावस्था को प्राप्त हो जाती है।

इसी कारण इन महापुरुषों को मन्त्र दृष्टा भी कहते हैं। सृष्टि की आदि से चला आया प्रजातन्तु (वंश परम्परा का धागा) इन तपोधन पुत्रैषणा आदि संसार संसर्ग कराने वाली वासनाओं से विमुक्त ऋषिजनों तक आकर सदा के लिये टूट जाता है। निष्काम वृत्ति से जगत् के कल्याण की अभिलाषा से प्रेरित हो यदि यह कृत कृत्य ऋषिगण अपने तपो बीज के बल से कोई सन्तान उत्पन्न भी कर दें तो यह लोक का भाग्योदय ही समझना चाहिये। परन्तु सर्व बन्धनों से निर्मुक्त एक पूर्ण आत्मज्ञानी की सन्तान से चला हुआ वंश वस्तुतः एक नया ही वंश होता है क्योंकि तीव्र ज्ञान

की अग्नि से भस्म हुआ तंतु यदि फिर भी आग को फैलने लगे तो इसको ऐसा ही समझना चाहिये जैसे कि सूखा हुआ वृक्ष फिर हरा हो जावे अथवा मरा हुआ पुरुष पुनः जन्म ले लोक में प्रकट हो जावे।

गौतम तथा भरद्वाज ऋषि तो ब्रह्मज्ञानियों में शिरोमणि हुए हैं। अतः इनसे चले हुए वंश, मूल पुरुष से बिलकुल अलग और स्वतन्त्र ही है।

इस कारण एक वंश वृक्ष से संबन्ध रहते भी केवलाङ्गिरस, गौतमाङ्गिरस तथा भरद्वाजाङ्गिरस गोत्रों के पुरुषों का परस्पर विवाह सम्बन्ध होना संकरता का हेतु नहीं है। इस ही सिद्धान्त के अनुसार कश्यप, वसिष्ठ अगस्त्य, अत्रि और विश्वामित्र आदि गोत्रों के पुरुषों के परस्पर विवाह संबन्ध होते हैं।

विवाह सम्बन्ध विषय में शास्त्रकारों के अनेक मत भेद प्रचलित हैं तथापि सर्वलोक मान्य धर्मशास्त्र मनुस्मृति ने इस विषय को इस प्रकार स्पष्ट कर दिया है कि

असपिण्डा च या मातुरसगोत्रा च या पितुः।
सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने ॥२॥

मनु० अ० ३ श्लो० ५

अर्थ—माता की सपिण्डा अर्थात ६ पीढ़ी तक नाना आदि के वंश में उत्पन्न हुई मौसी आदि की संतान को छोड़कर। तथा नाना की ६ पीढ़ी तक की सगोत्रा को छोड़कर। तथा पिता की सपिण्डा अर्थात बुवा आदि की संतान को छोड़कर। तथा अपने गोत्र को छोड़कर अन्य गोत्र में उत्पन्न हुई कन्या के साथ विवाह सम्बन्ध करना चाहिए ॥ २ ॥

आपस्तम्ब सूत्रः—

सगोत्र प्रवरायाहि निषिद्धं पाणिपीडनम्।
अज्ञानादथवा मोहात् प्रजापत्यव्रतं चरेत् ॥३॥

अर्थात—यदि अज्ञानता से अथवा मोह से जो पुरुष अपने गोत्र की कन्या से विवाह कर लेता है तो वह (उस कन्या को त्यागकर) प्राजाप्य व्रत करने पर शुद्ध होता है ॥३॥

तथा यमः—

सगोत्र प्रवरां कन्या मूढां शास्त्रोपगम्य च।
तस्यां चन्डालमुत्पाद्य ब्राह्मण्या देवहीयते ॥४॥

अर्थात—जो मूढ जान पूछकर भी सगोत्रा कन्या के साथ (विवाह) अथवा गमन करता है तो वह ब्राह्मणत्व से हीन हो जाता है और उस कन्या से उत्पन्न हुई

संतान चाण्डाल होती है (अथवा वह कुल नष्ट हो जाता है।

इस विषय में स्मृतिकारों के अनेक प्रमाण उपस्थित है जिनको यहां विस्तार भय से न लिखकर केवल इतना ही कहना उचित समझते है कि उपरोक्त मनु वाक्यानुसार ही विवाह संबन्ध करना चाहिए ।।४। ।इति।

~~~~

अथ एकादशोऽध्यायः ॥११॥

धीमान् ब्राह्मणों का देशान्तरी नाम

प्रश्न–क्या धीमान ब्राह्मणों का कोई अन्य देशान्तरी नाम भी है।

उत्तर–धीमान ब्राह्मणों का आदि मूल स्थान तो ब्रह्मावर्त ही है, जैसा कि "विश्व..मवंशभास्कर" के अ० १५ में कहा गया है कि:–

ऋभवो बहुधा गीता वेदेषु शिल्पकोविदः।
धीमन्तः विश्रुता लोके ब्रह्मावर्त निवासिनः ।।१।।

अर्थ–शिल्प के पण्डित ऋभु (रथकार अर्थात् शिल्पी) लोग वेदों में अनेक प्रकार से गाये गये (उच्चारण किये गये)है। ब्रह्मावर्त निवासी यह लोग 'धीमान्' नाम से प्रसिद्ध हैं ।।१।। तथापि इनका देशान्तरी नाम मैथिली है।

प्रश्न–धीमान ब्राह्मणों का मैथिली नाम कैसे हुआ ?
उत्तर–जब मनु (मरीचि), मय (अत्रि), शिल्पी (भृगु) तथा विश्वज्ञ (अंगिरा) आदि शिल्पाचार्यों की सन्तान ब्रह्मावर्त में निवास करती थी तब वहां यज्ञ हुआ करते और वेदमंत्र गाये जाया करते थे क्योंकि इन ऋभवों(धीमानों)को कर्म वेद में इस प्रकार कहा हैकि:-

सौधन्वना ऋभवः सूर चक्षस सम्वत्सरे सम पृच्यन्त धीतिभिः ।।२।। (ऋगवेद। सं० १ सू० ११०। मंत्र ४)

अर्थ–(सौधन्वनाः) सुधन्वा। विश्वकर्मा के पुत्र (ऋभवः) रथकार शिल्पी लोग (सूर्यचक्षसः] सूर्य के समान ज्ञान वाले [सम्वत्सरे] वर्ष भर सब ऋतुओं में[धीतिभिः] अग्निष्ठोम दि यज्ञ कर्मों से[समपृच्यन्त] संयुक्त हुए हैं। [इति सायणः]

इस मन्त्र में ऋभु शब्द बहुवचन में आया है जैसे कि:–'सौधन्वना ऋभवः' अर्थात् ऋभु [रथकार धीमन्] लोग सुधन्वा(विश्वकर्मा)की संतान है और वह रथकार धीमान् लोग सब ऋतुओं में अग्निष्टोमादि यज्ञ कर्मों के
~~~~

करने वाले हुए हैं इससे स्पष्ट है कि यह ब्रह्मावर्त निवासी (ऋभवः) धीमान लोग नित्य यज्ञ करते और वेद मंत्र गाया करते थे ॥२॥ यह बात ऋभु की व्युत्पत्ति से भी भली भांति झलकती है। ऋभु शब्द की व्युत्पत्ति यास्काचार्य ने निरुक्त के अ० ११ खं० २६ में इस प्रकार दी है कि:—

ऋभवः ऋतेन भांतीति वा उरु भान्तीति वा ऋतेन भान्तीति वा ऋतेन भान्तीति वेति ॥३॥

अर्थात्—जो यज्ञ से प्रकाशमान हो। ज्ञान अथवा विज्ञान के कारण बहुत चमकते हों और जिनकी सत्ता ज्ञान तथा सत्य में ही हो उनको ऋभु कहते हैं। तात्पर्य यह है कि ऋभु रथकार अर्थात धीमान लोग सदैव अग्निष्ठोमादि यज्ञ कर्म करने वाले अपने ज्ञान और विज्ञान [सर्वो-कृष्ट शिल्प] केवल से संसार में बहुत चमकने वाले [प्रकाशमान] हुए हैं।

यह ऋभु अर्थात धीमान लोग विश्वकर्मा परब्रह्म के ज्येष्ठ पुत्र अङ्गिरा के वंशज कहलाते हैं क्योंकि:—

अष्टौ चांगिरसः पुत्रा आग्ने यास्तेष्वुदाहृताः ॥४॥
बृहस्पतिरुतथ्यश्च पयस्य शान्ति रेवच।
घोरो विरूप संवर्त सुधवा चाष्टमः स्मृतः ॥५॥

(महा भारत अनुशासन पर्व अ० ८५)

अर्थ—अग्नि अर्थात शिल्प विद्या से सम्बन्ध रखने वाले अङ्गिरा (विश्वज) के ८ पुत्र हुए हैं। जिनमें १ बृहस्पति, २ उतथ्य, ३ पयस्य, ४ शान्ति, ५ घोर, ६ विरूप ७ संवर्त और ८ वां सुधन्वा हुआ ॥४।५॥

ऋभवश्च सुधन्वनः ॥६॥

(वायु पु० । उत्तरभाग । अ० ४ । श्लो० १०२)

इस प्रकार अङ्गिरा (विश्वज) के पुत्र सुधन्वा (विश्वकर्मा) हुए। तिस सुधन्वा (विश्वकर्मा) के पुत्र ऋभु (धीमान) लोग हैं। ६॥ तथा:—

ऋणु तांगिरसो वंश मग्ने पुत्रस्य धीमतः।
यस्यान्ववाये संभूता भरद्वाजा सगौतमाः ।७।

(वायु पुराण। उत्तर भा० अ० ४ श्लो० ९६)

बृहस्पतेर्भरद्वाजो विश्रुतः सुमहा यशाः।
रथकाराः स्मृताः देवाऋषियो ये परिश्रुताः ॥८॥

(वायु पु० । उत्तर भाग । अ०४ । श्लो० १०३)

अर्थात—अग्नि(विश्वकर्मा परमेश्वर)के सुपुत्र धीमान अङ्गिरा के वंश को सुनों जिनके कुल में गौतम और भरद्वाज उत्पन्न हुए हैं ॥७॥ तथा: बृहस्पति के पुत्र भर महा यशस्वी हुए हैं। यह सब रथकार (धीमान) ब्राह्मण तथा वेदार्थ के वक्ता ऋषि हुए हैं ॥८॥ इन ही रथकार(ऋभवों)धीमान् ब्राह्मणों से राजा निमि ने अपना

यज्ञ कराया था तथा निमि के पुत्र जनक ने मिथुलापुरी नामक नगर निर्माण कराकर इन ऋभवों (धीमानों) की स्थापना तथा प्रतिष्ठा की थी तब से धीमान ब्राह्मणों का देशान्तरी नाम मैथिल हुआ है।

प्रश्न:-निमि राजा के पुरोहित तो वशिष्ठ जी थे फिर उन्होंने अन्य ब्राह्मणों से यज्ञ कैसे कराया।

उत्तर:-विष्णु पुराण के अंश ४ अध्याय ५ में लिखा है कि:—

इक्ष्वाकुतनयो योऽसौ निमिर्नाम सहस्त्रंस्वत्सरं
सत्रमारेभे ।।९।। वशिष्ठंचहोतारं वरयामास ।।१०।

अर्थात्-इक्ष्वाकु का जो निमि नामक पुत्र था उसने एक सहस्त्र वर्ष में समाप्त होने वाले यज्ञ का आरम्भ किया ।।९।। उस यज्ञ में उसने वशिष्ट जी को होता वरण किया ।।१०।।

वशिष्ट ने उससे कहा कि पांचसौ वर्ष के यज्ञ के लिए इन्द्र ने मुझे पहले ही वरण कर लिया है। अतः इतने समय तुम ठहर जाओ, वहां से आने पर तुम्हारा भी ऋत्विज होजाऊंगा।।११।।वशिष्ट के ऐसा कहने पर राजा ने उन्हे कुछ भी उत्तर नही दिया। वशिष्ट ने यह समझ कर कि राजा ने मेरा कथन स्वीकार कर लिया है इन्द्र का यज्ञ आरम्भ कर दिया ।।१२।।

ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तंड के प्रकरण ४८ में लिखा है कि:—

स्वायगुरुं वसिष्ठाख्य मन्य कर्मणि संस्थितम् ।
निमिश्चित्त मिदं ज्ञात्वा ह्यनाय्यान्वाम् द्विजोत्तमान् ।।१३।।
यज्ञं चकार धर्मात्मा मोक्षकर्मणि तत्परः ।
तपोगुरुः समायतस्तयोर्वादो महान भूत् ।।१४।।
सत्रदेहौयेत तुश्च द्वयोः शापान्मिथः किल ।
मित्रावरुण यो वीर्या दुर्वश्यां प्रपितामह ।।१५।।
जतो निमिश्चतत्रैव द्विजोः संजीवितः पुनः ।
तदा निमिर्द्विजान् प्राहमाभून्मे देहबन्धनम् ।।१६।।
ममवशोद्भवश्चाग्रे युष्मान् संपालयिष्यति ।
इत्युक्त्वा तान्निमिः पश्चाद्देहं त्यक्त्वा हरिययौ।।१७।।
ऋत्विजश्च निमेर्देहं ममन्थुर्योगमार्गतः ।
तस्माच्चपुरुषो जातो दिव्यदेहधरः प्रभुः ।।१८।।
जन्मनाजनकः सोऽभूद्विदेहस्तु विदेहजः ।
मथनान्मैथिलश्चैव मिथिला येन निर्मिता ।।१९।।
मैथिला ब्राह्मणाश्चैवतेन संस्थापिता मुदा ।
ते सर्वे मैथिला जातानिमि यज्ञ समागताः ।।२०।।

अर्थात्-राजा निमि ने अपने गुरु वशिष्ठ को इन्द्र का यज्ञ कराने के वास्ते गये जानकर दूसरे (आंगिरस अर्थात धीमान्) ब्राह्मणों को बुलाकर ।।१३।। मोक्ष

भिलाषा से यज्ञ किया । पीछे वशिष्ट आये और अपने बिना (दूसरे धीमान ब्राह्मणों के द्वारा) यज्ञ किया देख के राजा को शाप दिया कि तेरा देहपतन हो । निमि ने कहा कि हे गुरु तुमने देहधर्म न विचार लोभ के लिए शाप दिया इस वास्ते तुम्हारा देह भी पतन हो ॥१४॥ इससे दोनों का देहपतन हो गया तत्पश्चात वशिष्ट तो मित्रावरुण के वीर्य से ऊर्वशी नामक के गर्भ से उत्पन्न हुए और राजा निमि को उन ब्राह्मणों ने देवप्रार्थना से पुनः जीवित कर लिया । तब निमि राजा उन ब्राह्मणों से कहने लगे कि मुझे देह बंधन नहीं चाहिए ।१५।१६। आगे जो मेरे वंश में उत्पन्न होगा वह तुम्हारा पालन करेगा । ऐसा कह के निमि देहत्याग के विष्णु लोक को गया ॥१७॥ पीछे उन धीमान ऋत्विजों ने योग बल से निमि का देहमथन किया उसमें से दिव्य देहधारी पुरुष उत्पन्न हुआ ॥१८॥ जन्म हुआ इस वास्ते जनक नाम भया । विदेह से उत्पन्न हुआ इस वास्ते विदेह नाम भया । उसने अपने नाम से मिथिला नामक नगर निर्माण कराया ॥१९॥ पीछे निमि के यज्ञ में जितने (धीमान्) ब्राह्मण आये थे उन सबको अपने देश में स्थापित किया और वह सब मैथिल नाम से प्रसिद्ध हुए ॥२०॥

यही कारण था कि उन मैथिल (शिल्पियों अर्थात् धीमान्) ब्राह्मणों के रचित नाना प्रकार के शिल्पीय पदार्थों की सौन्दर्यता से मिथिला शिल्प का केन्द्र तथा सभ्यता का मूल बन गया था ॥

किसी ने सच कहा है कि:—

प्रपालितेष्वत्र नरेन्द्रवर्यैः शिल्पं विदेहेषु पुरा चकाशे ।
मूलं प्रकर्षस्य सुखप्रतिष्ठा प्रवतनबीजं भुवि सभ्यतायाः ।२१

अर्थात्—मिथिला देश में जहां कि जनक से श्रेष्ठ राजा राज्य करते थे, शिल्प पहले प्रकाशित हुआ जो कि उन्नति का मूल है, सुख का स्थान और सभ्यता का बीज है, जिसके बिना वह सभ्यता फल फूल ही नहीं सकती है ।।२१॥

क्योंकि सभ्यता का मूल तो ज्ञान और विज्ञान ही है:—

मोक्षे धीर्ज्ञानमन्यत्र विज्ञानं शिल्पशास्त्रयोः ।२८।
(अमरकोष, १।६)

अर्थात् शिल्प तथा शास्त्र में बुद्धि जब मोक्ष के लिये होती है तो उसको ज्ञान कहते हैं और जब लौकिक उन्नति के लिये होती है तो उसको विज्ञान कहते हैं । इस प्रमाण से यह स्पष्ट है कि जैसे शास्त्र मोक्ष का

सहायक है वैसे ही शिल्प भी है। इस प्रकार मोक्षशास्त्र तथा शिल्प का गहरा सम्बन्ध है। अतः ऋभु (शिल्पी ब्राह्मण लोग) ज्ञान (शास्त्र) तथा विज्ञान (शिल्पशास्त्र) दोनों में परिपूर्ण थे।

इसी से मिथुला पहले ज्ञान (शास्त्र) और विज्ञान (शिल्प) का केन्द्र समझा जाता था। परन्तु कालचक्र प्रवाह से जब यहां अनेक मत मतान्तरों की द्वेषाग्नि प्रचलित हुई और सबने शिल्प की निन्दा करना ही अपना मुख्य कर्तव्य समझा, इतना ही नहीं बल्कि वेदान्त के परम पावन एकात्मवाद का आशय इस जगत् में कुछ न करना ही समझा जाता था। यही शिल्प की परम अधोगति का समय था ॥२२॥

चंचलां राज्यलक्ष्मींहि, प्रतीचिमभिगामिनीम्।
तज्जीविनोऽनुधावन्त स्तत्रत्या विज्ञशिल्पिनः ॥२३॥
प्रतीच्येष्वपि देशेषु प्रसृता दैव नोदिता।
यत्र यत्र वसन्तस्ते मैथिला इति संज्ञिताः ॥२४॥
तद्विदो विबुधा प्राहु धीमन्तो मिथिला गताः।
शिल्पशास्त्र विदश्चाहि तद्योगाच् मैथिला इति।२५॥

(विश्वकर्म वं० । ब्रा० वर्ण व्य० । भाग १)

अर्थात्–एक जगह न ठहरने वाली राज्य लक्ष्मी जब पश्चिम की ओर जाने लगी तो वह मैथिल शिल्पी लोग जिनकी जीविका राज्य लक्ष्मी पर निर्भर थी उसके पीछे भागते हुए देवगति वश भारत के पश्चिम देशों में भी फैल गये ॥२३॥ इस ही कारण वह जहां तहां निवास करते हुए मिलते हैं ॥२४॥ इस इतिहास के विषय को जानने वाले पुरुषों का कथन है कि धीमान् लोग मिथिला से आये हुए हैं। इसी कारण देश सम्बन्ध से यह लोग जो शिल्प शास्त्र के पण्डित हैं मैथिल कहे जाते हैं।

इस प्रकार से धीमान् ब्राह्मणों का देशान्तरी नाम मैथिल है। इत्यादि संक्षेप से जानना ॥२५॥ इति ॥

अथ द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

धीमान् (शिल्पी) ब्राह्मणों के कुलाचारः–

शिल्पीब्राह्मणनामानः धीमन्तः परिकीर्तिताः।
पञ्चशिल्परताश्च तान्पञ्चालाश्चापि कथ्यते ॥१॥

अर्थ–शिल्पी ब्राह्मणों का नाम धीमान् है तथा पांच प्रकार लोहा, लकड़ी, तांबा, पत्थर और सुवर्ण के शिल्पों के कर्ता होने से उन (धीमान् ब्राह्मणों) को पञ्चाल भी कहते हैं ॥१॥

तथाः—

शिल्पीब्राह्मणनामानः पञ्चालाः परिकीर्तिताः ॥२॥

(शैवागम अ० ७)

अर्थात् शिल्पी (धीमान्) ब्राह्मणों का नाम पञ्चाल है ॥२॥

पञ्चालानाञ्च सर्वेषामाचार इति गीयते ।

अष्टाङ्गयोगषट्कर्मपञ्चयज्ञा इति श्रुति ३।

यजनं याजनं चैव तथा चाध्ययनं स्मृतम् ।

अध्यापनं ततः प्रोक्तं तथा दानप्रतिग्रः ।४।

स्नानं सन्ध्या त्रिकालेषु चाग्निहोत्रं तथैव च ।

षट्कर्माण्येवमेतानि पञ्चालानां स्मृतानिच ।५।

(शैवागमे तथा ब्राह्मोत्पत्तिमार्तण्डे, अ० ५१)

अर्थ—अब पञ्चालों अर्थात् शिल्पी धीमान् ब्राह्मणों के आचार कहते हैं। जो कि उनके लिए अष्टाङ्ग योग, षट्कर्म तथा पञ्चमहायज्ञ करना कहा है ।

अष्टाङ्गयोग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि यह आठ अङ्ग योग के हैं ।३।

षट्कर्म—१ यज्ञ करना कराना, २ वेद पढ़ना पढ़ाना, ३ दान देना तथा लेना, ४ स्नान करना,

५ संध्या करना और ६ अग्निहोत्र करना यह छः कर्म है४

पञ्च महायज्ञ—१ ब्रह्मयज्ञ, २ देवयज्ञ, ३ पितृयज्ञ, ४ भूतयज्ञ और ५वां अतिथियज्ञ करना, यह पंच — महायज्ञ हैं। इस प्रकार से यह पंचालों (धीमान् ब्राह्मणों) के अष्टागयोग, षट्कर्म और पंच महायज्ञ करना तीन प्रकार के आचार हैं ।५। तथा—

स्नानं सन्ध्या जपो होमः स्वाध्ययं पितृतर्पणम् ।

आतिथ्यं वैश्वदेवं चाप्यष्टकर्माणि शिल्पिनाम् ।६।

मुलस्तव पु० अ० १० श्लोक २५, विश्व ब्रह्म कु०। (सं० ३ पृ० ७३)

अर्थ—स्नान, संध्या, गायत्री का जप, होम, स्वाध्याय, पितृतर्पण, अतिथि सत्कार और बलीवैश्व करना यह शिल्पियों (धीमान् ब्राह्मणों) के आठ कर्म हैं ।६।

तथा

रथकातस्थताचक्रु पंच कुत्याणि सर्वदा ।

षट्दर्शनाद्यनुष्ठानं षट्कर्म निरताश्चये ।।७।।

स्कन्द पु० । नागर खंड । अ० ६ । विश्व ब्रह्म कुलोत्साह । (सं०२ पृ० ७३

* अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथि पूजनम् ॥मनु० ३ । ७० ।।

अर्थ—वेद का पढ़ना और पढ़ाना ब्रह्मयज्ञ है, माता पिता आदि बड़ों को अन्नादि से तृप्त करना पितृयज्ञ है, अग्नि में होम करना देवयज्ञ है, भूतों को बली देना भूतयज्ञ है तथा अतिथि (अभ्यागत) का सत्कार करना अतिथि यज्ञ है ।

अर्थ—रथकार (धीमान) लोग सदा से पांच प्रकार के शिल्प करने वाले तथा षट् दर्शनादिकों का अनुष्ठान और षट्कर्मों [वेद पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, कराना, दान देना तथा दान लेना इत्यादि] के करने वाले है ।।७।।

(जैन) आदि पुराण के पर्व ३६ । श्लोक १०३ में लिखा है कि:—

सयजन् याजयन् धीमान् यजमानै रुपासितः ।
अध्यापयन्न धीयानो वेद वेदांग विस्तरम् ।।८।।

अर्थात—अन्य यजमान भी जिसकी उपासना करते हैं । ऐसा वह धीमान् (ब्राह्मण)स्वयं यज्ञ करता है और कराता है तथा वेद वेदांग के विस्तार का स्वयं पढ़ता और दूसरों को पढ़ाता है ।।८।।

हारित स्मृतिः के अ० ४ श्लो० ४० में लिखा है कि:—

प्राणायाम त्रयं धीमान् यथा न्याय मतन्द्रितः ।
जपं यज्ञं ततः कुर्यात् गायत्री वेद मातरम् ।।९।।

अर्थ—धीमान् ब्राह्मण तीन प्राणायाम करे तथा इन्द्रियों से न्याय पूर्वक धर्माचरण करता हुआ गायत्री का जप करे, यज्ञादि कर्म करे और वेदादि सब शास्त्रों का पठन पाठन करे ।।९।।

तथाः—

मनुर्मयस्थता त्वष्ठा शिल्पी विश्वज्ञ एवच ।
विश्वकर्म सुताह्येते रथकारास्तु पंच च ।।१०।।
वैदिकेनैव मार्गेण तद्वंश्याना विशेषतः ।
वर्षेगर्भाष्ठमे तेषांह्यु पनीति क्रियास्मृताः ।।११।।
गर्भाधानादिकं कर्म कर्त्तव्यं वेद मार्गतः ।
गर्भाधानं निषेकंतु तुर्येपुंसवन क्रिया ।।१२।
मासेष्ठमेहि सीमन्तों जातोवै जातकर्मच ।
नामकर्म कादर्शोह्नि षष्टे मासेऽन्न भोजनम् ।।१३।
वर्ष तृतीये चौलस्या दष्टमे चोपनायनम् ।
वेदव्रत चतुष्कंतु गोदानं षोडशे तथा ।।१४।
वत्सरे स्नातकं कर्म वैवाहं पैत्रिमेधिकम् ।
इतिषोडश कर्माणि वंश्यानां विश्वकर्मणः ।।१५।

(स्कन्द पु० । नागर खंड । अ० १३-गवर्नमेन्ट, ओरियण्टल लायब्रेरी मद्रास)

अर्थ—मनु, मय, त्वष्ठा,, शिल्पी तथा विश्वज्ञ यह आदि विश्व कर्मा के पांचो पुत्र रथकार (धीमान्) हुए हैं।।१०।। उनके वंश में विशेषतः वेदानुकूल गर्भ से आठवें वर्ष में उपनयन संस्कार होना उचित है ।।११।। और जो गर्भाधानादिक कर्म है वह भी सब वेदानुकूल ही

करने चाहिए। १ गर्भाधन संस्कार २ गर्भस्थिति के पश्चात् चौथे महीने में पुंसवन संस्कार करें ॥१२॥ ३ गर्भ से छटे महीने में सीमन्तोनयन संस्कार ४ जात कर्म ५ जन्म से ग्यारवे दिन नामकर्ण ६ जन्म से चौथे महीने में निष्कर्म (भ्रमण) ७ जन्म से छटे महीने में अन्नप्राशन संस्कार करें।१३। तथा ८ जन्म से तीसरे वर्ष में मुण्ड़न ९ (कर्णवेध) १० गर्भ वा जन्म से आठवें वर्ष में उपनयन संस्कार करें। ११वेदारम्भ १२समावर्तन १३ विवाह संस्कार १४ (वानप्रस्थ) १५ सन्यास और १६ वां अन्त्येष्ठा संस्कार इत्यदि प्रकार से यह सोलह संस्कार रूप कर्म विश्वकर्म वंशाय शिल्पी धीमान ब्राह्मणों के हैं।

इस प्रकार पाठक स्वयं समझ सकते हैं कि विश्व कर्म वंशीय शिल्पी ब्राह्मणों को समस्त वैदिक कर्मों के करने का शास्त्रों में पूर्णाधिकार है।१४।१५।

इसलिए:—

षट्कर्म पञ्च यज्ञांश्च संस्कारा षोड़शास्त्र तथा।
धीमान् विप्र कुलानांच कर्त्तव्यं वेद मार्गतः।१६।

अर्थाद्–अध्यापन मध्ययनं आदि षट्कर्म, तथा पञ्च महायज्ञ और गर्भाधानादि सोलह संस्कार रूप कर्म धीमान् अर्थात् शिल्पी ब्राह्मणों के कुल में उत्पन्न हुए

पुरुषों को नियत समय पर ही वेदानुकूल करने चाहिए।

तथा

विश्वकर्मकुले जाता धीमन्तः ब्राह्मणस्मृताः।
पञ्च शिल्प रतास्ते च शौचाचार समन्विताः।१७।
षट्कर्म पञ्च यज्ञाश्च कर्म षोड़श निष्ठिताः।
सदाचारश्च संयुक्ता मद्य मांस विवर्जिताः।१८।
शास्त्रज्ञाः सत्य वक्ता च पूज्यते भुवि सज्जनैः।
एतानि सर्वकर्माणि धीमतां ब्राह्मणां किल।१९।

अर्थात्–धीमान् (शिल्पी) ब्राह्मण लोग विश्वकर्मा के वंश में उत्पन्न हुए हैं और वे [लोहा, लकडी, ताम्बा पत्थर और सुवर्ण इन] पांच प्रकार के शिल्प कर्मों के करने वाले तथा शौचाचारादि पवित्रता से रहने वाले हैं।१७। तथाषट्कमो के रहने वाले तथा ब्रह्म, देव आदि पञ्च महायज्ञों के करने वाले और गर्भाधानादि सोलह संस्काररुप कर्मो के करने वाले है तथा सदाचार से रहने वाले और मद्य, मांसादि के सेवन से सदैव बचने हारे हैं।१८। शास्त्रों के ज्ञाता हैं, सत्यवक्ता हैं और पृथिवी पर सज्जनों करके पूजित हैं। इस प्रकार यह सब कर्म धीमान् (शिल्पी) ब्राह्मणों के हैं।

संक्षेपेण मया प्रोक्तं धीमतां सर्व लक्षणम् ।
ज्ञातव्यं च प्रयत्नेन ग्रन्थेऽस्मिन्बुद्धिमत्तरैः ॥

अर्थ—इत्यादि प्रकर से यह धीमान ब्राह्मणों के सर्व प्रकार के लक्षण मैंने संक्षेप रूप से ही वर्णन किये हैं सो इस ग्रन्थ में सम्पूर्ण कहे हुए विद्वज्जनों कर के यत्न पूर्वक जानने चाहिए ।

ग्रन्थोऽयं निर्मिता प्रेम्णा उदयरामशर्मणा ।
यत्र कुत्राप्यशुद्धं चेत् क्षन्तव्यं पूर्णसज्जनैः ॥

अर्थ—यह (धीमान् ब्राह्मणकुलादर्श नामक) ग्रन्थ (श्री स्व० पं० कृष्णचन्द्र जी शर्मा के सुपुत्र मुख्य) पं० उदयराम शर्मा (सिद्धान्त रत्न, कस्बा नाङ्गल) जि० बिजनौर निवासी) ने प्रेम पूर्वक निर्माण किया है यदि इसमें जहां कहीं भी कुछ अशुद्धि रह गई हो तो पूर्ण सज्जन पण्डितों करके क्षमा करने योग्य हैं ।

दोहा

शाके शलिवाहन अठारह सो अडसट सार ।
आषाढ़े शुक्ला सप्तमी देवासुर गुरुवार ॥
धीमान् ब्राह्मण कुलादर्श ये ग्रन्थ अतुल ।
अति उत्तम सम्पूर्ण भयो जाति हित का मूल ।

जो पढ़े सुनें इस ग्रन्थ को ताके मिटें क्लेश ।
सुख सम्पत्ति और मान्य से फूले फलें हमेश ॥

इति श्री "धीमान् ब्राह्मण कुलादर्श" नामक ग्रन्थ समाप्त ।
ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

प्रिय पाठकों

मैं आपको यह बतलाना चाहता हूं कि वर्तमान कालीन जाति अभिमान कोई भी ब्राह्मण अपनी उत्पत्ति वेद के आधार पर इस स्पष्ट रूप से सिद्ध नही कर सकते जिस स्पष्टता से शिल्पज्ञ ब्राह्मण वेदादि से सिद्ध कर सकते हैं।

हमारे अंगिरा वंश का स्पष्ट प्रमाण जिस प्रकार अथर्ववेद से मिलता है, उसके मुकाबिले दूसरों का परिचय नही मिलता।

हमारा धर्म और कर्म इस आपत्तिकाल में चाहे पुर्व-काल की अपेक्षा कितना ही गिर गया हो परन्तु शिल्पज्ञ ब्राह्मणों ने भिक्षा वृत्ति को कभी ब्राह्मण कर्म नही स्वीकार किया और इसी कारण दूसरे ब्राह्मणों से रोटी बेटी का व्योहार भी छूट गया, कारण कि आलसी ब्राह्मणों ने ब्राह्मण के षट कर्म में दान लेना ब्राह्मण कर्म का यह अर्थ किया कि भिक्षा मांगना तथा मुर्दे के १२ वें १३ वें आदि को भोजन करना इत्यादि, शिल्पी ब्राह्मणों ने दान लेने का यह अर्थ लगाया, जो ठीक है, कि विद्या का दान लेना तथा देना ब्राह्मण का छटा कर्म, है और इसी सिद्धांत पर जमे रहने के कारण शिल्पज्ञ ब्राह्मणों ने भिक्षा और प्रतिग्रह को बुरा समझ शिल्प कला द्वारा अपना निर्वाह करना उचित समझा। हमारे इस सिद्धान्त की पुष्टि में शास्त्रकार